पंजी. संख्या-153/2016-17

वर्ष १ जनवरी-फरवरी २०१७ (संयुक्तांक), विक्रमी सम्वत् २०७३ अंक १-२

श्रीमती उमा शर्मा
करनाल

ओ३म्

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम ।।

सत्य और ज्ञान से भरपूर आर्यसमाज नोएडा का मुखपत्र

विश्ववारा संस्कृति

मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

''सा प्रथमा संस्कृतिविश्ववारा''

नमो ब्रह्मणे नमस्ते वायो त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि। त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिश्यामि ऋतं वदिश्यामि सत्यं वदिश्यामि तन्मामवतु तद्वक्तारमवतु।
अवतु माम् अवतु वक्तारम्।।

ईश्वर का व्यापक ज्ञानस्वरूप पूज्य और सहज स्वभाव जानकर हम उसकी उपासना करें तथा जीवन में सदा सत्य का आचरण करें।

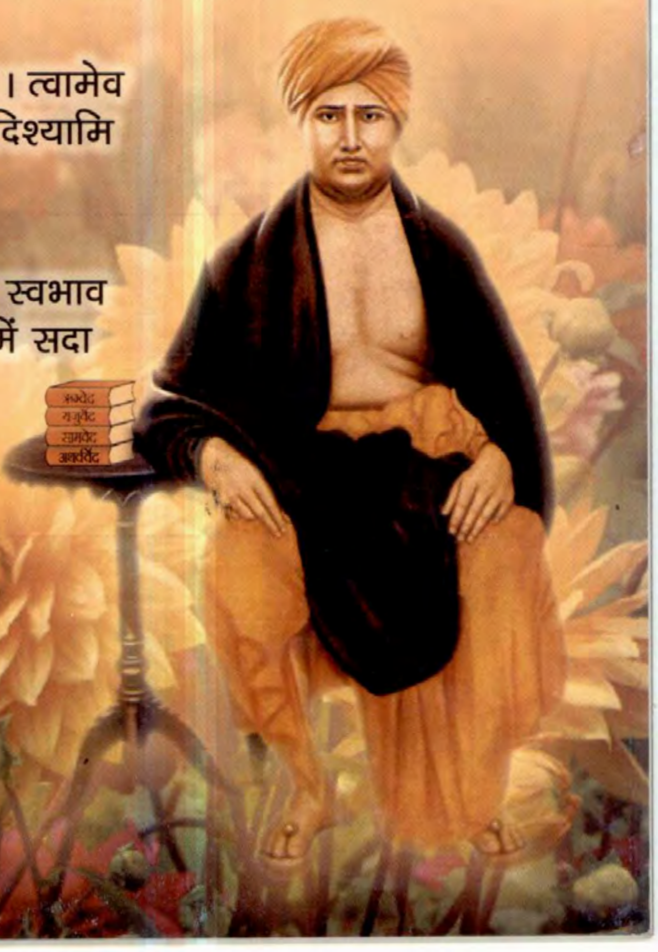

101 कुण्डीय ऋग्वेदीय महायज्ञ

पंजी. संख्या-153/2016-17

ओ३म्

।। कृण्वन्तो विश्वमार्यम ।।

विश्ववारा संस्कृति

मानवीय जीवन मूल्यों की संरक्षक पत्रिका

वर्ष १ जनवरी-फरवरी २०१७ (संयुक्तांक), विक्रमी सम्वत् २०७३ अंक १-२

संरक्षक : श्री आनन्द चौहान
श्री सुधीर सिंघल
अध्यक्ष : श्री रविन्द्र सेठ

संपादक मंडल

प्रबंध संपादक : मंत्री आर्य कै. अशोक गुलाटी
प्रधान सम्पादक : आचार्य डा. जयेन्द्र कुमार
उप-सम्पादक : श्रीमती मंजु नारंग
सह सम्पादक : डा. सुधीर (जे.एन.यू.)
सम्पादन सहयोग : श्रीमती शकुन्तला सेतिया
श्रीमती गायत्री मीना
श्रीमती आदर्श बिश्नोई
श्रीमती मधु भसीन
परामर्श मण्डल : श्री विजेन्द्र कठपालिया
श्री अशोक आनन्द
व्यवस्थापक : श्री ओमकार शास्त्री
श्री मोहन प्रसाद उपाध्याय

प्रकाशक

आर्य समाज, बी 69, सेक्टर 33, नोएडा
दूरभाष : 0120-2505731

Website : www.aryasamajnoida.org
E-mail : info@aryasamajnoida33@gmail.com

मुद्रक

अंकोर पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, बी-66, सेक्टर 6, नोएडा

मूल्य

एक प्रति : 20रु, वार्षिक शुल्क : 250रु, पाँच वर्ष : 1100रु,
आजीवन : 2100रु, विदेश में वार्षिक शुल्क : 3100रु

सम्पादकीयः

स्वर्ग की नाव

डॉ. जयेन्द्र कुमार

जब से मनुष्य पैदा हुआ है तब से वह निरंतर सुख की लालसा में लगा हुआ है। यों तो संसार में अनेक प्रकार के सुख हैं किन्तु प्रत्येक इंसान की सबसे बड़ी इच्छा स्वर्ग प्राप्ति की होती है इसलिए हमारे देश में प्रत्येक दिवंगत आत्मा के आगे स्वर्गीय शब्द का प्रयोग किया जाता है। कोई कहता है स्वर्ग स्थान विशेष है, तो कोई कहता है स्वर्ग में बहुत कुछ मिलता है, किन्तु अधिकांश रुप से स्वर्ग स्थान विशेष में सुख साधनों के रुप में कल्पना करता है। किन्तु ऐसा भी नहीं है कि स्वर्ग नहीं है। स्वर्ग है, किन्तु वह इसी धरा धाम में है। स्वर्ग प्राप्ति के लिए पंच महायज्ञों को स्वर्ग की नाव हमारे ऋषियों ने बताया है। जिसमें प्रथम है ब्रह्मयज्ञ। आज का इंसान विज्ञान के अविष्कार एवं उनसे प्राप्त सुखों के वशीभूत होकर केवल प्रकृतिमय हो गया है, तथा ईश्वर को सर्वथा भूल गया है। जैसे घड़े को बनाने वाला कुम्भकार है, जैसे घड़ी को बनाने वाला कारीगर है। वैसे ही परमात्मा सारी सृष्टि को बनाने वाला है।

शेष पृष्ठ-२ पर

स्वर्ग वहां है जहां एक इंसान प्रातः-सायं सृष्टिकर्ता ईश्वर की उपासना करता है, स्वर्ग वहीं है जहां एक इंसान अपने बूढे माता-पिता की सेवा करता है, स्वर्ग वहाँ है जहां एक आदमी घर आये मेहमान का दिल से स्वागत करता है, स्वर्ग वहां है जहां एक इंसान दूसरे भूखे इंसान की भूख मिटाता है, किसी बेसहारा को सहारा देने के लिए अपना हाथ बढ़ाता है, जहां व्यक्ति इन्सानियत के शिखर को जीते हुए खुशियों से भर देता है सारी दुनियां से प्यार करता है, दुनियां के लिए जीता है और दुनियां के लिए मरता है, जहां जातिवाद नहीं, जहां रंगभेद नहीं, जहां छुआछूत नहीं, वहीं होता है स्वर्ग। जहां पत्नी पति का आदर करती हो और पति पत्नी से बेअथाह मुहब्बत करता हो, जहां माता पिता की पूजा होती हो, जहां सत्य ही धर्म हो। वही स्वर्ग है।

कथा

सेठ धर्म पाल वाली

अग्नि होत्र को हमारे ऋषियों ने स्वर्ग की नाव कहा है। यदि आप आर्यसमाज की परंपरा को आगे बढता देखना चाहते हैं तो आप दैनिक यज्ञ करें तथा अपने बच्चों को नियमित रूप से यज्ञ करना सिखायें। यज्ञ की परंपरा ही आर्यसमाज की वैदिक परंपरा को जीवित रखती है।

।। अययियो हतवनों भवति।।

यज्ञ तो है स्वर्ग की नाव मिलती है इससे सुखों की छांव
रोग मिटा दे शोक घटा दे खुशियों के यह दीप जला दे ।।
ईश्वर जल्दी खुश हो जाते
यज्ञ कर्ता के कष्ट मिटाते ।
यज्ञ तो है--
अग्नि देव जब भोग हैं पाते
एक के बदले सौ हैं दिलाते।
यज्ञ तो है--
शांति तेज भरा है इसमें
नाना सुख सम्पति है इसमें
यज्ञ तो है--
चाहे अमीर चाहे गरीब हो
हवन करे जो खुशनसीब हो
यज्ञ तो है--
मत मजहब का भेद न कोई
जात पात-पात रंग खेल न कोई
यज्ञ तो है--
श्रेष्ठ कर्म को यज्ञ बताये
ये सब की पीड़ा हर जाये
यज्ञ तो है-
ब्रह्मदेव का ध्यान लगाते
जीवन खुशियों से महकाते

प्रबन्ध संपादक की कलम से

॥ सत्प्रयास ॥

आर्य कै० अशोक गुलाटी

प्रबन्ध सम्पादक "विश्ववारा संस्कृति"

मो०-9871798221, 9555779591, ईमेल-captakg21@yahoo.co.in

मैं यह अनुभव करता हूँ कि आर्य समाज में अनेक पत्र पत्रिकायें आज भी निकल रही हैं किन्तु उनमें से अधिकांश ऐसी हैं जिनका स्तर अति साधारण है। आज दुनियां बड़ी तेजी से बदल रही है। आर्य समाज को बदलते समय के साथ सामंजस्य रखना होगा। आधुनिक संसाधनों का उपयोग ज्यादा से ज्यादा करने की आवश्यकता है। आज फेसबुक, वॉट्सएप, मैसेज आदि का युग होते हुए भी पत्रिकाओं का महत्व कम नहीं हुआ है। आर्य समाज की पत्रिकाओं का स्तर यदि अच्छा हो तो निश्चित रुप से पाठक वर्ग पर उसका बहुत प्रभाव पड़ता है। "साहित्य ही समाज का दर्पण होता है"। समाज में होते उतार-चढाव, उन्नति-अवनति की अभिव्यक्ति साहित्य के माध्यम से समाज का सर्वाधिक हित किया जाता है, इसलिये महर्षि दयानन्द सरस्वती ने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश में पठन-पाठन विषय का विधान किया है। संस्कारों के सन्देश से युक्त नैतिक आदर्शों से परिपूर्ण देशप्रेम, भक्तिभाव, माता-पिता व गुरुओं के प्रति प्रेम समुत्पन्न करने में सक्षम साहित्य की नितांत आवश्यकता है। वेद एवं संस्कृत साहित्य में विद्यमान मानवीय तत्वों का प्रकाश इस धरा धाम पर सर्वत्र फैले, इस आशय से इस पत्रिका को प्रकाशित करने का सत्प्रयास हमने किया है। इसमें सभी पाठकों की शुभकामनाएं हमें चाहिए जिससे हमें इस सत्प्रयास में सफलता प्राप्त हो।

असली ज्ञानी

सुलभा परम विदुषी थी। वह अपना सारा समय ईश्वर की आराधना में बिताती थी। लोग उनसे बहुत प्रभावित थे और उनका आदर करते थे। एक दिन उन्हें पता चला कि महाराजा जनक एक सिद्ध पुरुष हैं और संतों तथा ज्ञानियों का बहुत सम्मान करते हैं। वह उनसे मिलने पहुँच गई।

महाराजा जनक ने उनका स्वागत-सत्कार किया, फिर बातचीत के बाद भोजन के लिए आमंत्रित किया। भोजन के बाद एक बार विभिन्न प्रसंगों पर चर्चा चलने लगी। अचानक जनक ने सवाल किया, 'आपने विवाह क्यों नहीं किया? मुझे तो ऐसा नहीं लगता कि गृहस्थ जीवन ज्ञानार्जन या भक्ति में बाधा डालता है। अब मुझे ही देखो। मैं तो गृहस्थ होते हुए भी राजसत्ता से विरक्त रहा हूँ।' जनक के ऐसा कहने पर सुलभा ने कोई उत्तर नहीं दिया, बस मुस्कराती रहीं।

जनक फिर बोले, 'आप तो स्वयं परम विदुषी और ज्ञानी हैं। आप ही बताइए न 'वास्तव में ज्ञानी कौन होता है?' जनक के इस प्रश्न पर सुलभा सहजता से बोलीं, 'महाराज जहाँ तक में सोचती हूँ ज्ञानी व्यक्ति कभी आत्मप्रशंसा नहीं करता। वह कम बोलता है तथा मौन को महत्व देता है। वह इस तथ्य के प्रति विरक्त होता है कि वह राजा है या रंक, गृहस्थ है या सन्यासी। ज्ञानी इन सबसे बेपरवाह रहता है। वह अपनी स्थिति को लेकर सचेत नहीं रहता।' महाराज जनक समझ गये कि सुलभा का इशारा क्या है। उन्हें ख्याल आया कि अभी थोड़ी ही देर पहले वह आत्मप्रशंसा में लीन थे। वह लज्जित हो गये। उन्होंने कहा, 'सुलभा, असली ज्ञानी तो आप हैं। आज आपने मेरी आँखें खोल दीं। आगे इन बातों का ध्यान रखते हुये मैं अपनी वाणी पर संयम रखूँगा। यह मेरा सौभाग्य है कि आज आप आयीं और आपने मुझे एक नई दृष्टि दी। 'सुलभा उन्हें आशीर्वाद देकर चली गई।

उपनिषदों में वर्णित ब्रह्म का स्वरुप

डॉ. मंजु नारंग
डी.लिट्.

परब्रह्म स्वरुप परमात्मा सर्वान्तर्यामी, एकांकी, निश्चल, निर्विकार तथा सर्वशक्तिमान है। ब्रह्मज्ञान को समझने वाला व्यक्ति वास्तव में ब्रह्म के अल्पांश को ही जान सकता है, क्योंकि उस परम ब्रह्म का जो अंश प्राणियों तथा देवों में विद्यमान है उन दोनो अंशों को सम्मिलित कर देने पर भी ब्रह्मा के पूर्ण स्वरुप की प्राप्ति संभव नहीं होती है। ब्रह्म ज्ञान तो वास्तव में चिन्तन का विषय है। वह जानने वालों के लिए अज्ञात तथा न जानने वालों के लिए ज्ञात है। अहंकार ब्रह्मज्ञान के लिए सर्वाधिक बाधक तत्व तथा पतन का कारण है। आत्मज्ञान के द्व ारा मनुष्य को बल की प्राप्ति होती है उसी आत्मबल रुपी ज्ञान से उसको अमृत रुपी परमात्मा की प्राप्ति होती है परब्रह्म परमात्मा को प्राप्त करने वाले व्यक्ति को यथार्थ ज्ञान प्राप्त होता है।

ईशोपनिषद के अनुसार वह ब्रह्मा निश्चल एकरस एकांकी तथा मन से भी अधिक तीव्र गति वाला है। वह सभी का आदि, स्वरुप तथा सर्वज्ञ है। उस ब्रह्म को समस्त ज्ञानेन्द्रियां प्राप्त नहीं कर सकती हैं क्योंकि ब्रह्म इंद्रियों का विषय नहीं है। वह परमात्मा निश्चल होते हुए भी अन्य धावनशील जनों का अतिक्रमण कर देता है। वह स्थिर होते हुए भी गतिशील प्रतीत होता है। इन्द्रियां उसके स्वरुप को प्राप्त नहीं कर सकतीं। वह एक स्थान पर स्थित रहते हुए भी अन्य गतिशील का अतिक्रमण कर देता है। वायु इत्यादि को क्षति उसके द्वारा ही प्राप्त होती है। वह समस्त जीवों के अन्दर व बाहर दानों स्थान पर विद्यमान है

अनेजदेकं मनसो जवीयो नैनद्देवा प्राप्नुवन्पूर्वमर्षत्।
तत्धावतो ऽन्यानत्येति तिष्ठत्रस्त्रिन्नयो मातरिश्रवा दधाति।।
त्देजति तन्नैजति तद्दूरे तद्वन्तिकें।
तद्न्तस्य सर्वस्य तदु सर्वस्यास्य बाह्यतः
।। ईशोपनिषद 4-5।।

केनोपनिषद के अनुसार जीवात्मा से अव्यक्त शक्ति श्रेष्ठ होती है। अव्यक्त शक्ति से पुरुष श्रेष्ठ होता है। उस परमपुरुष से श्रेष्ठ अन्य कुछ नहीं है वह सभी की पराकाष्ठा तथा परम गति है। वह परब्रह्म परमात्मा शब्द, स्पर्श, रुप, रस तथा गन्ध से रहित है। वह अविनाशी, अनादि तथा अनन्त है। वह आत्मा से भी उत्कृष्ट है तथा ध्रुव अर्थात सत्य स्वरुप है। उस परम तत्व का ज्ञान हो जाने पर व्यक्ति मृत्यु के मुख से मुक्त हो जाता है।

मुण्डकोपनिषद के अनुसार वह ब्रह्मा प्रकाशमान सभी में व्याप्त, हृदय रूपी गुफा में विचरणशील तथा महान पदयुक्त है। इस ब्रह्मा में गतिशील, श्वास लेने वाले तथा पलक झपकने वाले समस्त प्राणी समाविष्ट हैं। वह ब्रह्मा सत् असत् रुपवर्नीय, वरिष्ठ तथा जीवात्माओं की बुद्धि से परे है। वह अविनाशी ब्रह्मा देदिप्यमान तथा अणु से भी अनुत्तर उसमें समस्त लोक तथा उन में निवास करने वाले अवस्थित हैं वही प्राण, वाणी तथा मन है। वही सत्य स्वरुप तथा अमृत रुप है, मनन् द्वारा वेधनीय।

ईशोपनिषद के अनुसार यह संपूर्ण संसार ब्रह्मरुप ही है, यह आत्मा भी ब्रह्म रुप ही है। यह ब्रह्म तथा आत्मा चार चरण वाला है। यही स्थूल तथा सूक्ष्म एवम् अव्यक्त रुपों में प्रभावशाली है। इसका प्रथम चरण स्थूल वैश्वानर है, जो जागृत स्थान में रहने वाला बहिष्प्रज्ञ भोक्ता है। स्पन के सदृश अव्यक्त विश्व उसका अधिष्ठान है। उसके द्वारा अहस्य लोक का ज्ञान अन्तः चक्षुओं से होता है। वह सूक्ष्म विषयों का भोक्ता है तथा ज्योतिर्मय है। वही तेजस ब्रह्म का द्वितीय चरण है। जिस अवस्था में मनुष्य किसी भोग की कामना करता है तथा स्वप्न भी नहीं देखता है ऐसी सुषुप्तावस्था में एकाग्रवृति वाला प्रकृष्ट ज्ञान स्वरुप तथा आनन्द स्वरुप वह एक मात्र आनन्द का भोक्ता

है। उसका मुख तेजोमय चैतन्य रुप है, वह प्राज्ञ ही ब्रह्म का तृतीय चरण है। वह ब्रह्म ही सभी का ईश्वर है। वह सर्वज्ञ,सर्वान्तर्यामी तथा संपूर्ण जगत का कारण भूत है। वह समस्त भूतों की उत्पत्ति तथा विनाश का कारण है। वह अन्तः करण तथा बहिः प्राज्ञ से रहित है, जो दोनों की प्रज्ञा से रहित है तथा ज्ञान स्वरुप भी नहीं है। वह ज्ञानेन्द्रिय तथा कर्मेन्द्रिय गम्य नहीं है। वह क्रिया रहित प्रतीकों से भिन्न, चिन्तन तथा कथन की सीमा से परे तथा एकमात्र अनुभव गम्य है। वह संपूर्ण प्रपंचों से लय स्थान है। वह शान्त स्वरुप कल्याणमय तथा अद्वैत रुप है। ब्रह्म का चतुर्थ चरण भी है। वही परमात्मा तथा ज्ञातव्य है।

2- कठोपनिषद //1,3,11,15//
3- मण्डकोपनिषद //21211,2//

ऐतरेयोपनिषद् के अनुसार हृदय ही मन है। सम्यक ज्ञान आदेश प्राप्त करने की समता, धारणा शक्ति, मनोरथ भोग्य शक्ति एवं प्राण शक्ति ये समस्त शक्तियां परमात्मा सजा की ही बोधिका है। यह पुरातन स्वरुप आत्मा ही ब्रह्म, इन्द्र तथा प्रजा का अधिपति है। ये समस्त देवगण तथा वायु, अग्नि, आकाश तथा जल, पृथ्वी पंच महाभूत हैं। ये इतर तथा उनके कारण रूप बीज तथा अण्डज, स्वेदज, उद्‌भिज, जरायुज प्राणी तथा गौ अथवा मनुष्य, पक्षी तथा हस्ती सहित ये समस्त जड़ जंगम जगत, प्राज्ञ, नेत्र तथा अज्ञान में ही समाहित हैं। प्रज्ञान में ही समस्त लोक आश्रित हैं। प्रज्ञा ही उसका विलय स्थल है। अतएव प्रज्ञान ही ब्रह्म है।

छान्दोग्योपनिषद के अनुसार यह सम्पूर्ण जगत निश्चित रूप से ब्रह्म स्वरूप है। यह उसी से उत्पन्न होता है। उसी में लय हो जाता है तथा उसी से संचालित होता है। राग, द्वेष से दूर रहकर शान्त भाव से उसी की उपासना करनी चाहिए। निश्चित रूप से मनुष्य संकल्पमय है। इस लोक में मनुष्य जिस प्रकार का संकल्प करता है मृत्यु के उपरान्त उसी को प्राप्त करता है, अतएव मनुष्य को संकल्प करना चाहिए ।

4- माण्डूक्योपनिषद 2- 7/
5- ऐतरेयोपनिषद 3/11/2- 3

यह परमात्मा प्राण स्वरूप, मनोमय शरीर युक्त, देदीप्यमान, सत्य संकल्प सम्पन्न आकाश के समान विराट स्वरूप वाला, सम्पूर्ण गन्ध एवं रस से सम्पन्न, सर्वत्र व्याप्त, वाणी तथा भ्रमरहित है। हृदयरूपी गुफा में विद्यमान यह आत्मा धान, जौ, सरसों अथवा श्यामाक तण्डुल से भी सूक्ष्म है। हृदयरूपी गुफा में स्थित यह आत्मा पृथ्वी, आकाश, अन्तरिक्ष, द्यौलोक अथवा इन समस्त लोकों से भी विराट है। यह सम्पूर्ण जगत का रचयिता सम्पूर्ण कामनाओं से युक्त समस्त प्रकार की गन्ध एवं रस से युक्त, सर्वत्र व्याप्त एवं भ्रम रहित है। हृदय रूपी गुफा में विद्यमान आत्मा ही ब्रह्मा है। शरीर का परित्याग करने पर भी हम इसी को प्राप्त होंगे। इस प्रकार के निश्चय से युक्त व्यक्ति इसमें सन्देह नहीं करता है। वह निश्चित रूपेण ब्रह्म को प्राप्त कर लेता है।

बृहदारण्यकोपनिषद् के अनुसार ब्रह्म के व्यक्त तथा अव्यक्त दो स्वरुप हैं। इनमें व्यक्त मरण धर्मा है तथा अव्यक्त अमर्त्य है। मर्त्य तथा स्थिर है तथा अमृत् सतत् गतिमान है इसके सत्य को भी सत्य नाम से जाना जाता है। प्राण ही निश्चित रूप से सत्य है। वाक् ही ब्रह्म है। वही उस ब्रह्म का आत्मा तथा आकाश है। वही उसकी प्रतिष्ठा है। प्रज्ञा समझकर उसकी ही उपासना करनी चाहिए। वाक् ही प्रज्ञा है। वाक् शक्ति के द्वारा ही बन्धु बांधवों का ज्ञान होता है। वाक् के माध्यम से इतिहास, पुराण, उपनिषद्, विद्या, श्लोक, सूत्र, अन्वाख्यान, यज्ञ, कर्म हुत, अशित, पापित, परलोक तथा समस्त मूलों का ज्ञान होता है।

श्वेताश्वतरोपनिषद् के अनुसार वेदों में वर्णित वह परब्रह्म पावन प्रतिष्ठा से युक्त तथा अविनाशी है। उसमें ही तीनों लोक स्थित हैं। ब्रह्म वेत्ता पुरुष अपने ही अन्तस् में अधिष्टित उस ब्रह्म को जानकर उसी में निष्ठापूर्वक लीन होकर विभिन्न योनियों में जन्म बन्धन से मुक्त हो जाता है। नश्वर जगत तथा अनश्वर चेतना के संयोग से निर्मित इस संपूर्ण व्यक्त तथा अव्यक्त विश्व का पोषण वह परमात्मा करता है। जीवात्मा संसार के विषयों का ज्ञान होने के कारण उसमें आबद्‌ध होता है, परन्तु परमात्मा का ज्ञान होने से समस्त बन्धनों से मुक्त हो जाता है। वह परमात्मा ही रुद्र है वही अपनी प्रभुता संपन्न शक्ति के द्वारा समस्त लोकों पर शासन करता है। समस्त प्राणी का नहीं, अपितु उसी का आश्रय ग्रहण करते हैं।

वही समस्त प्राणियों के अन्दर स्थित है। वही समस्त लोकों की रचना करके उनका रक्षक होकर प्रलयकाल में उनको समेट लेता है। वह एकांकी परमात्मा सभी ओर नेत्रों वाला, बाहुओं तथा चरण वाला है, वही मनुष्य, इत्यादि जीवों को बाहुओं से तथा पक्षी, कीट इत्यादि को पंखों से मुक्त करता है। वही द्यावा पृथ्वी का रचयिता है।

छान्दोग्योपनिषद् 3/14/
1- 4 8- *बृहदारण्यकोपनिषद्* 213

अतएव् परब्रह्म परमात्मा की प्राप्ति इन्द्रियादि विषयों के द्वारा संभव नहीं है। वह परमात्मा अजर, अमर, अविनाशी, शुद्ध स्वरुप तथा सर्वान्तर्याती है इन्द्रियों को तद्नुकूल क्षमता उस परम ब्रह्म से ही प्राप्त होती है। ब्रह्म को जानने का मिथ्याभिमानी व्यक्ति वास्तव में परमात्मा को नहीं जानता है। तथा उस ब्रह्म को नहीं जानने वाला व्यक्ति उसको जानता है, क्योंकि वह परमब्रह्म अज्ञात के लिए ज्ञात तथा ज्ञात के लिए अज्ञात है। वह परमब्रह्म सभी का धारक, पोषक, नियामक तथा विज्ञानात्मा है। प्राणी उसी की अनुकम्पा से सांसारिक पदार्थों का उपयोग करते हैं। वास्तव में तो वह परमब्रह्म अद्भुत्, वर्णनातीत तथा उसकी महिमा अपरंपार है हम सभी को उसको प्राप्त करने का यथा संभव प्रयास करना चाहिए। वही ध्येय, वही वन्दनीय तथा उपास्य है।

8- *श्वेताश्वतरोपनिषद* 1/7- 8
9- *वही*- 3/2- 3

''विश्ववारा संस्कृति'' - सदस्यता आवेदन पत्र

नाम ....

उम्र .... दिनांक ....

पता ....

....

शहर .... राज्य .... पिन कोड ....

फोन .... मोबाइल ....

नगद/चैक/मनी आर्डर/डी.डी. संख्या ....

संरक्षक/आजीवन/पंच वर्षीय/वार्षिक सदस्यता हेतु संलग्न है।

चैक मनी आर्डर ''आर्य समाज'' के नाम भिजवाएं अथवा आप लोग सीधे ही 'यूनाइटेड बैंक ऑफ इण्डिया'', नोएडा, सै.-३३ में खाता संख्या-1483010100182, **IFSC-UTB10SCN560** में जमा कराकर रसीद की प्रतिलिपि निम्न पते पर भेजें:

प्रबन्ध सम्पादक
''विश्ववारा संस्कृति''
आर्य समाज, बी-69, सेक्टर-33, नोएडा (उ.प्र.)
संपर्क सूत्र: 0120-2505732, 9871798221, 9555779571
ई-मेल: infoaryasamajnoida33@gmail.com

मानवता के भगवत पथ प्रदर्शक - महर्षि दयानन्द सरस्वती

श्रीमती मधु भसीन
मन्त्रिणा
महिला समाज नोएडा

महर्षि दयानन्द सरस्वती के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रकट किये गये विचार उनकी महानता का दिग्दर्शन कराते हैं :-

जर्मन विचारक मैक्सम्यूलर :- स्वामी दयानन्द सरस्वती ने हिन्दू धर्म के सुधार का बड़ा कार्य किया और जहाँ तक समाज सुधार का सम्बन्ध है, वे बड़े उदार हृदय थे। उन्होंने वेदों के भाष्य किये, जिनसे मालूम होता है कि वे पूर्ण विज्ञ थे। उनका स्वाध्याय बहुत व्यापक था।

फ्रेंच लेखक रोम्यां रोलां :- ऋषि दयानन्द ने भारत के शक्तिशून्य शरीर में अपनी शक्ति अविचलता तथा सिंह पराक्रम फूंक दिया है। ऋषि दयानन्द उच्चतम व्यक्तित्व के पुरुष थे। दयानन्द में कर्मयोगी, विचारक, और नेता की उपयुक्त प्रतिभा का दुर्लभ सम्मिश्रण था। दयानन्द ने अस्पृश्यता व अछूतपन के अन्याय को सहन न किया और उनके अपहृत अधिकारों का उत्साही समर्थक दूसरा कोई न हुआ। भारत में स्त्रियों की शोचनीय दशा को सुधारने में भी दयानन्द ने बड़ी उदारता व साहस से काम लिया। वास्तव में राष्ट्रीय भावना और जनक्रांति के विचार को क्रियात्मक रूप देने में सबसे अधिक प्रबल शक्ति उन्हीं की थी। वे पुनर्निर्माण और राष्ट्रीय संगठन के अत्यन्त उत्साही पैगम्बरों में से थे।

महात्मा गाँधी :- महर्षि दयानन्द के विषय में मेरा मन्तव्य यह है कि वे हिन्दुस्तान के आधुनिक ऋषियों, सुधारकों, श्रेष्ठ पुरुषों में से एक थे। उनका ब्रह्मचर्य, विचार स्वतन्त्रता, कार्यकुशलता आदि गुण लोगों को मुग्ध करते थे। मैं जैसे प्रगति करता हूँ वैसे-वैसे प्रगति का मार्ग याद आता है। ब्रिटिश राज्य स्थापित होने के पश्चात् जनता के साथ सीधा सम्पर्क करने का मार्ग खोज निकाला। ऋषि दयानन्द और उनकी आर्य समाज ने प्रजा में नवचेतना पैदा की है। हिन्दू समाज की अनेक कुरीतियों को दूर करने का प्रयत्न किया है। राष्ट्रीय शिक्षण, स्त्री शिक्षण तथा दलितोद्धार आदि न भुलाई जा सकने जैसी राष्ट्र की महान सेवा की है। महर्षि दयानन्द के इस पवित्र देशोपकारी कार्य का कभी अपमान होगा तो मैं उसे महापाप समझूंगा।

कांग्रेस के संस्थापक श्री ए.ओ. ह्यूम :- स्वामी दयानन्द के सिद्धान्तों के विषय में कोई मनुष्य कैसी ही सम्मति स्थिर कर ले, परन्तु यह तो मान लेना पड़ेगा कि स्वामी दयानन्द भारत के लिए गौरव रूप थे। दयानन्द को खोकर भारत को महान हानि उठानी पड़ी है। वे एक महान और श्रेष्ठ पुरुष थे।

महामना पं. मदनमोहन मालवीय :- महर्षि दयानन्द तपोमूर्ति थे। उन्होंने भारत में दिव्यज्योति प्रकाशित की थी। उन्होंने हिन्दू समाज को पुनर्जन्म देने के सब प्रयत्न किये थे। वे भारत को स्वतन्त्र तथा दिव्य देखना चाहते थे। आर्यकाल को पुनः लाने के लिए प्रयत्नशील रहे। उन्होंने मृत प्रायः हिन्दू जाति में पुनः प्राण संचार किया था। वे हिन्दू संस्कृति तथा भारतमाता के अक्षयपात्र थे।

लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक :- ऋषि दयानन्द जाज्वल्यमान नक्षत्र थे। जो भारतीय आकाश में अपनी अलौकिक आभा से चमके और गहरी निद्रा में सोये

हुए भारत को जागृत किया। स्वराज्य के सर्वप्रथम सन्देशवाहक तथा मानवता के उपासक थे।

सर्वपल्ली डॉ. राधाकृष्णन :- स्वामी दयानन्द एक महान सुधारक और प्रखर क्रान्तिकारी महापुरुष थे, साथ ही उनके हृदय में सामाजिक अन्यायों को उखाड़ फेंकने की प्रचण्ड अग्नि भी विद्यमान थी। उनकी शिक्षाओं का हम सबके लिए भारी महत्त्व है। उन्होंने हमें यह सन्देश दिया था कि हम सत्य की कसौटी पर कसकर ही किसी बात को स्वीकार करें।

राजा भोज और बुढ़िया

एक बार राजा भोज और कवि माघ दोनों जा रहे थे। चलते-चलते दोनों रास्ता भूल गये। रास्ते में उनकी नजर एक बुढिया पर पड़ी। उन्होंने बुढिया से पूछा कि ये रास्ता तो कहीं नहीं जाता। इस पर चलने वाले जहाँ चाहते हैं वहाँ पहुँच जाते हैं। तुम कौन हो? राजा ने कहा- "हम पथिक हैं।" बुढिया ने कहा कि इस दुनिया में पथिक दो ही हैं एक सूर्य और दूसरा चन्द्रमा। जो बिना थके चलता रहता है। बुढिया ने फिर पूछा कि तुम कौन हो? राजा ने कहा- "हम अतिथि हैं।" बुढिया ने कहा- "इस दुनिया में अतिथि दो ही हैं-एक धन दूसरा यौवन। तुम कौन हो सही से बताते क्यों नहीं कि तुम कौन हो?" ये सुनकर राजा गुस्से में आ गया और बोला कि हम राजा हैं। बुढिया ने कहा कि इस दुनिया में राजा दो ही हैं एक इन्द्र दूसरा यमराज। इसमें से कौन हो तुम? राजा ने गुस्से में कांपते हुए कहा कि हम क्षमतावान हैं। बुढिया ने कहा कि इस दुनिया में क्षमतावान तो दो ही हैं। एक स्त्री दूसरी पृथ्वी। बुढिया ने राजा से पूछा अब बताओ तुम कौन हो? राजा बोला हम साधु हैं। यह सुनकर बुढिया बोली इस दुनिया में साधु तो दो ही हैं। एक शील और दूसरा संतोष। तब राजा ने कहा हम परदेशी हैं। बुढिया बोली इस दुनिया में परदेशी दो ही हैं, एक पेड़ का पत्ता, पता नहीं कब गिर जाये दूसरा जीव, पता नहीं कब मर जाये। तब राजा ने कहा कि हम गरीब हैं। बुढिया बोली इस दुनिया में गरीब तो दो ही हैं एक बकरी का जाया बकरा और दूसरी लड़की, जिसके साथ बाँध दो उसी के साथ चुपचाप चली जाती है। तब राजा ने कातर स्वर में कहा कि माँ तुम तो सब जानती हो कि हम हारे हुए हैं। तब बुढिया ने कहा- "इस दुनिया में हारे हुए तो दो ही हैं एक कर्ज लेने वाला दूसरा बेटी का बाप, कितना भी दे दे बकाया रह ही जाता है।" बुढिया बोली मैं सब जानती हूँ कि तुम राजा भोज हो और तुम्हारे साथ कवि माघ हैं तुम दोनों को घमण्ड हो गया है इस रास्ते पर तुम चलते जाओ तुम भारव नगरी पहुँच जाओगे। किंवदन्ति है कि बुढिया और कोई नहीं बल्कि माँ सरस्वती थी।

शिक्षा की नींव

पुराने जमाने की बात है। प्रसिद्ध संत बहिणाबाई प्रातःकाल पूजा-पाठ से निवृत्त होकर अपनी कुटिया के पास लगे पौधों को सींच रही थीं। तभी चार विद्वान उनके पास आए। संत बहिणाबाई ने उनका स्नेहपूर्वक स्वागत सत्कार किया। विद्वानों ने कहा, 'हम लोग एक जिज्ञासा लेकर आपके पास आए हैं। 'बहिणाबाई ने पूछा, 'कैसी जिज्ञासा?' विद्वानों ने कहा, 'हमने वेदों का अध्ययन किया है। विभिन्न शास्त्रों से भी ज्ञान अर्जित किया है। किन्तु हम उनका उपयोग करने में असमर्थ हैं। हम देश के अलग-अलग क्षेत्रों में जाकर काम करना चाहते हैं ताकि राष्ट्र के चारों कोनों में सद्गुणों के प्रसार की नींव पड़े। पर हम अपना लक्ष्य हासिल करने के लिए क्या करें।'

बहिणाबाई ने चारों विद्वानों से उनके लक्ष्य के बारे में जानना चाहा। पहले विद्वान ने कहा, 'मैं देश में सबको शिक्षित और सभ्य देखना चाहता हूँ।' दूसरे ने कहा,'मैं सबको सुखी और सम्पन्न बनाना चाहता हूँ। तीसरा सबको एकता के सूत्र में बांधना चाहता था। चौथा बोला, 'मेरी आकांक्षा है कि मेरा देश एक शक्तिशाली राष्ट्र के रूप में विकसित हो।' चारों विद्वानों की राय सुनने के बाद बहिणाबाई ने कहा, 'अपना लक्ष्य पाने के लिए आप सब मिलकर शिक्षा का प्रसार करके ये सारे लक्ष्य कैसे हासिल किये जा सकते हैं? इस पर बहिणाबाई ने कहा, 'हे विद्वानों, शिक्षा वह माध्यम है जिस पर व्यक्ति का हर लक्ष्य और उसका विवेक टिका है। जब लोग शिक्षित होंगे तो उनमें उद्यमिता विकसित होगी। उद्यम करने से व्यक्ति की आमदनी बढेगी जिससे राष्ट्र आर्थिक रूप से मजबूत होगा। तभी लोगों में एकता भी स्थापित होगी और राष्ट्र शक्तिशाली होगा। अलग-अलग गुण वाले पौधों में एक ही तरह की सिंचाई की जाती है लेकिन उनमें विभिन्न रंगरूप वाले फूल पैदा होते हैं। उसी प्रकार शिक्षित होकर लोग अपनी रुचि के अनुसार उद्यम करेंगे और उनमें बाकी गुण स्वतः आ जाएंगे।

आर्य समाज और भारत का नवजागरण

ओमकार शास्त्री
प्रवक्ता संस्कृत, आर्ष गुरुकुल, नोएडा

आर्य समाज ने भारत में राष्ट्रवादी विचारधारा को आगे बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। इसके अनुयायियों ने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में बढ़-चढ़ कर भाग लिया। आर्य समाज के प्रभाव से ही भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के भीतर स्वदेशी आन्दोलन आरम्भ हुआ था। स्वामी दयानन्द जी आधुनिक भारत के धार्मिक नेताओं में प्रथम महापुरूष थे जिन्होंने 'स्वराज्य' शब्द का प्रयोग किया। आर्य समाज ने हिन्दू धर्म में एक नयी चेतना का आरंभ किया था। स्वतंत्रता पूर्व काल में हिंदू समाज के नवजागरण और पुनरुत्थान आंदोलन के रूप में आर्य समाज सर्वाधिक शक्तिशाली आंदोलन था। यह पूरे पश्चिम और उत्तर भारत में सक्रिय था तथा सुप्त हिन्दू जाति को जागृत करने में संलग्न था। यहाँ तक कि आर्य समाजी प्रचारक फिजी, मारीशस, गयाना, ट्रिनिडाड, दक्षिण अफ्रीका में भी हिंदुओं को संगठित करने के उद्देश्य से पहुँच रहे थे। आर्य समाजियों ने सबसे बड़ा कार्य जाति व्यवस्था को तोड़ने और सभी हिन्दुओं में समानता का भाव जागृत करने का किया।

भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन

स्वामी दयानन्द सरस्वती की विचारधारा पर चलने वाले आर्य समाज ने भारत की आजादी में मुख्य भूमिका निभाई, महर्षि दयानन्द सरस्वती के जीवन के ०२ वर्षों (१८५६-१८५७ ई०) तक का उनके जीवनकाल में कोई विवरण नहीं मिलता है। उस समय महर्षि दयानन्द मेरठ की छावनी में सेना के जवानों को प्याऊ बनाकर जल पिलाते हुये यह सन्देश दे रहे थे कि विदेशी राज्य अच्छा नहीं होता, उन्होंने सन्देश दिया और मंगलपाण्डे ने १८५७ की क्रान्ति अंग्रेज अफसरों को मारकर कर दी थी। उसके बाद झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, रामप्रसाद बिस्मिल आदि शहीदों ने देश की आजादी के लिये अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया, वे राष्ट्रीय एवं क्षेत्रीय आह्वानों, उत्तेजनाओं एवं प्रयत्नों से प्रेरित, भारतीय राजनैतिक संगठनों द्वारा संचालित अहिंसावादी और सैन्यवादी आन्दोलन था, जिनका एक समान उद्देश्य, अंग्रेजी शासन को भारतीय उपमहाद्वीप से जड़ से उखाड़ फेंकना था। स्वाधीनता के लिए हजारों लोगों ने अपने प्राणों की बलि दी। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने १९३० कांग्रेस अधिवेशन मे अंग्रेजों से पूर्ण स्वराज की मांग की थी। आजादी के लिये सर्वप्रथम दी गई प्रेरणा के कारण ऋषि दयानन्द को आजादी का प्रथम देवता माना जाता है।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस, अधिकतर कांग्रेस के नाम से प्रख्यात, भारत के दो प्रमुख राजनैतिक दलों में से एक है, जिन में अन्य भारतीय जनता पार्टी हैं। कांग्रेस की स्थापना ब्रिटिश राज में १८८५ में हुई थी।[५] इसके संस्थापकों में ए.ओ. ह्यूम (थियिसोफिकल सोसाइटी के प्रमुख सदस्य), दादा भाई नौरोजी और दिनशा वाचा शामिल थे।[६], १८वीं सदी के आखिर में और शुरूआती से लेकर मध्य १९वीं सदी में, कांग्रेस भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम में, अपने १.५ करोड़ से अधिक सदस्यों और ६ करोड़ से अधिक प्रतिभागियों के साथ, ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के विरोध में एक केन्द्रीय भागीदार बनी।

१९४७ में आजादी के बाद, कांग्रेस भारत की प्रमुख राजनीतिक पार्टी बन गई। आजादी से लेकर २०१६ तक, १६ आम चुनावों में से, कांग्रेस ने ६ में पूर्ण बहुमत जीता है और ४ में सत्तारूढ़ गठबंधन का नेतृत्व किया। अतः, कुल ४९ वर्षों तक वह केन्द्र सरकार का हिस्सा रही। भारत में, कांग्रेस के सात प्रधानमंत्री रह चुके हैं। पहले जवाहरलाल नेहरू (१९४७-१९६५) थे और हाल ही में मनमोहन

सिंह(२००४-२०१४) थे। २०१४ के आम चुनाव में, कांग्रेस ने आजादी से अब तक का सबसे खराब आम चुनावी प्रदर्शन किया और ५४३ सदस्यीय लोक सभा में केवल ४४ सीट जीती।

स्वदेशी आन्दोलन

भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का एक महत्वपूर्ण आन्दोलन, सफल रणनीति व दर्शन था। स्वदेशी का अर्थ है - 'अपने देश का'। इस रणनीति के लक्ष्य ब्रिटेन में बने माल का बहिष्कार करना तथा भारत में बने माल का अधिकाधिक प्रयोग करके साम्राज्यवादी ब्रिटेन को आर्थिक हानि पहुँचाना व भारत के लोगों के लिये रोजगार सृजन करना था। यह अंग्रेजी शासन को उखाड़ फेंकने और भारत की समग्र आर्थिक व्यवस्था के विकास के लिए अपनाया गया साधन था।

वर्ष १९०५ के बंग-भंग विरोधी जनजागरण से स्वदेशी आन्दोलन को बहुत बल मिला। यह १९११ तक चला और गान्धीजी के भारत में पदार्पण के पूर्व सभी सफल अन्दोलनों में से एक था। अरविन्द घोष, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, वीर सावरकर, लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक और लाला लाजपत राय स्वदेशी आन्दोलन के मुख्य उद्घोषक थे।[1] आगे चलकर यही स्वदेशी आन्दोलन महात्मा गांधी के स्वतन्त्रता आन्दोलन का भी केन्द्र-बिन्दु बन गया। उन्होंने इसे ''स्वराज की आत्मा'' कहा।

समाज सुधार

भारत को जिस तरह ब्रिटिश सरकार का आर्थिक और बाद में राजनीतिक उपनिवेश बना दिया गया था, उसके विरुद्ध भारतीयों की ओर से तीव्र प्रतिक्रिया होना स्वाभाविक था। चूंकि भारत धीरे-धीरे पश्चिमी विचारों की ओर बढ़ने लगा था, अतः प्रतिक्रिया सामाजिक क्षेत्र से आना स्वाभाविक कार्य थी। यह प्रतिक्रिया १९वीं शताब्दी में उठ खड़े हुए सामाजिक सुधार आन्दोलनों के रूप में सामने आई। ऐसे ही समाज सुधार आंदोलनों में आर्यसमाज का नाम आता है। आर्यसमाज ने विदेशी जुआ उतार फेंकने के लिए, समाज में स्वयं आंतरिक सुधार करके अपना कार्य किया। इसने आधुनिक भारत में प्रारंभ हुए पुर्नजागरण को नई दिशा दी। साथ ही भारतीयों में भारतीयता को अपनाने, प्राचीन संस्कृति को मौलिक रूप में स्वीकार करने, पश्चिमी प्रभाव को विशुद्ध भारतीयता को ''वेदों की ओर लौटो'' के नारे के साथ समाप्त करने तथा सभी भारतीयों को एकताबद्ध करने के लिए प्रेरित किया।

१९वीं शताब्दी में भारत में समाज सुधार के आंदोलनों में आर्यसमाज अग्रणी था। १८७५ में स्थापना के शीघ्र बाद ही इसकी प्रसिद्धि तत्कालीन समाज विचारकों, आचार्यों, समाज सुधारकों आदि को प्रभावित करने में सफल हुई, और कुछ वर्षों बाद ही आर्यसमाज की संपूर्ण भारत के प्रमुख शहरों में शाखायें स्थापित हो गई। स्वामीजी के विद्वतापूर्ण व्याख्यानों तथा चमत्कारिक व्यक्तित्व ने युवाओं को आर्यसमाज की ओर मोड़ा। अन्य समकालीन सामाजिक-धार्मिक आंदोलनों की अपेक्षा आर्यसमाज सही अर्थ में अधिक राष्ट्रवादी था। यह भारत में पनप रहे पश्चिमीकरण के विरुद्ध अधिक आक्रमणकारी स्वभाव रखने वाला आंदोलन था।

आर्य समाज ने अपनी स्थापना से ही सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध आन्दोलन का शंखनाद किया, जैसे-जातिवादी जड़मूलक समाज को तोड़ना, महिलाओं के लिए समानाधिकार, बालविवाह का उन्मूलन, विधवा विवाह का समर्थन, निम्न जातियों को सामाजिक अधिकार प्राप्त होना, आदि। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना के पीछे उपरोक्त सामाजिक नवजागरण को मुख्य आधार बनाया। उनका विश्वास था कि नवीन प्रबुद्ध भारत में, नवजागृत होते समाज में, नये भारत का निर्माण करना है तो समाज को बन्धनमुक्त करना प्रथम कार्य होना चाहिए। स्वयं ब्राह्मण होते हुए भी स्वामी जी ने ब्राह्मणों की सत्ता के खण्डन का प्रतिपादन किया और धार्मिक अंधविश्वास व कर्मकाण्डों की तीव्र भर्तसना की। अल्पकाल में ही वे भारत के समाज सुधार के क्षेत्र में नवीन ज्ञान-ज्योति के रूप में उदयीमान हुए। इसमें उन्होंने पाया कि भारतीय युवा पाश्चात्य अनुकरण पर जोर दे रहा है। अतः उन्होंने पाश्चात्य संस्कृति पर शक्तिशाली प्रहार

किया और भारतीय गौरव को सदैव ऊंचा किया।

सामान्यतः स्वामीजी ने भारतीय समाज तथा हिन्दूधर्म में प्रचलित दोषों को उजागर करने के साथ ही आंचलिक पंथों और अन्य धर्मों की भी आलोचना की। पुरोहितवाद पर करारा प्रहार करते हुए स्वामीजी ने माना था कि स्वार्थी और अज्ञानी पुरोहितों ने पुराणों जैसे ग्रंथो का सहारा लेकर हिन्दू धर्म को भ्रष्ट किया है। स्वामी जी धर्म सुधारक के रूप में मूर्तिपूजा, कर्मकाण्ड, पुराणपंथी, तन्त्रवाद के घोर विरोधी थे। इसके लिए उन्होंने वेदों का सहारा लेकर विभिन्न दृष्टांत किए। इससे उन्होंने सुसुप्त भारतीय जनमानस को चैतन्य करने का अदभुत प्रयास किया। स्वामी जी ने हिन्दुओं को हीन, पतित और कायर होने के भाव से मुक्त किया और उनमें उत्कट आत्मविश्वास जागृत किया। फलस्वरूप समाज पश्चिम की मानसिक दासता के विरुद्ध दृढ आत्मविश्वास तथा संकल्प के साथ विद्रोह कर सके। इन्हीं क्रांतिकारी विचारों के कारण वेलेंटाइन शिरोल ने स्वामीजी को 'इण्डियन अरनेस्ट' कहा।

शिक्षा का प्रसार

दयानंद एंग्लो वैदिक विद्यालय, गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

दयानंद एंग्लो वैदिक विद्यालय - अविभाजित भारत के कुछ भागों (मुख्यतः पंजाब) में आरम्भ किये गये विद्यालयों एवं महाविद्यालयों की एक शृंखला का नाम है। इसे आर्य समाज के महान सदस्य एवं शिक्षाविद् महात्मा हंसराज ने आरम्भ किया था। ये विद्यालय भारतीय चिंतन और भारतीय संस्कृति के साथ आधुनिक प्रौद्योगिकी के संगम हैं।

इतिहास

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य समाज की स्थापना की जिसका लक्ष्य भारतीय समाज को बौद्धिक, वैचारिक (emotionally) एवं आध्यात्मिक रूप से पुनर्जीवित करना था। उन्होंने ''वेदों की ओर वापस'' जाने का आह्वान किया जिसका वास्तविक अर्थ 'शिक्षा का प्रसार' करना था। स्वामी दयानन्द का विश्वास था कि शिक्षा के प्रसार के द्वारा ही देश के कोने-कोने में जागृति आयेगी।

महर्षि दयानन्द के सपनों को साकार करने के लिये उनके कुछ ज्ञानी, समर्पित एवं त्यागी अनुयायियों ने 'दयानन्द ऍंग्लो वैदिक कॉलेज ट्रस्ट तथा प्रबन्धन समिति' की स्थापना की। ०१ जून सन् १८८६ में इस समिति का पंजीयन (रजिस्ट्रेशन) हुआ। १८८६ में ही समिति का पहला डीएवी स्कूल, लाहौर में स्थापित हुआ और लाला हंसराज इसके अवैतनिक प्रधानाचार्य बनाये गये। इस प्रकार एक शैक्षिक आन्दोलन की नींव पड़ी। अनेक दूरदर्शी एवं राष्ट्रवादी, जैसे, लाला लाजपत राय, भाई परमानन्द, लाला द्वारका दास, बक्शी रामरतन, बक्शी टेक चन्द आदि ने इस आन्दोलन को आगे बढ़ाया और इसे पूरे देश में फैलाया।

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

भारत के उत्तराखण्ड राज्य के हरिद्वार शहर में स्थित है। इसकी स्थापना सन् १९०२ में स्वामी श्रद्धानन्द ने की थी। भारत में लार्ड मैकाले द्वारा प्रतिपादित अंग्रेजी माध्यम की पाश्चात्य शिक्षा नीति के स्थान पर राष्ट्रीय विकल्प के रूप में राष्ट्रभाषा हिन्दी के माध्यम से वैदिक साहित्य, भारतीय दर्शन, भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के साथ-साथ आधुनिक विषयों की उच्च शिक्षा के अध्ययन-अध्यापन तथा अनुसंधान के लिए यह विश्वविद्यालय स्थापित किया गया था।

इस विश्वविद्यालय का प्रमुख उद्देश्य जाति और छुआ-छूत के भेदभाव के बिना गुरु-शिष्य परम्परा के अन्तर्गत अध्यापकों एवं विद्यार्थियों के मध्य निरन्तर घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित कर छात्र-छात्राओं को प्राचीन एवं आधुनिक विषयों की शिक्षा देकर उनका मानसिक और शारीरिक विकास कर चरित्रवान आदर्श नागरिक बनाना है। विश्वविद्यालय हरिद्वार रेलवे स्टेशन से लगभग ५ किलोमीटर दक्षिण में स्थित है।

जून १९६२ में भारत सरकार ने इस शिक्षण संस्था के राष्ट्रीय स्वरूप तथा शिक्षा के क्षेत्र में इसके अप्रतिम योगदान को दृष्टि में रखते हुए विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के एक्ट १९५६ की धारा ३ के

अन्तर्गत समविश्वविद्यालय (डीम्ड यूनिवर्सिटी) की मान्यता प्रदान की और वैदिक साहित्य, संस्कृत साहित्य, दर्शन, हिन्दी साहित्य, अंग्रेजी, मनोविज्ञान, गणित तथा प्राचीन भारतीय इतिहास संस्कृति एवं पुरातत्त्व विषयों में स्नातकोत्तर अध्ययन की व्यवस्था की गई। उपरोक्त विषयों के अतिरिक्त वर्तमान में विश्वविद्यालय में भौतिकी, रसायन विज्ञान, कम्प्यूटर विज्ञान, अभियांत्रिकी, आयुर्विज्ञान व प्रबन्धन के अध्ययन-अध्यापन की व्यवस्था है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा स्थापित स्वायत्तशासी संस्थान 'राष्ट्रीय मूल्यांकन एवं प्रत्यायन परिषद्' (NACC) द्वारा मई २००२ में विश्वविद्यालय को चार सितारों (****) से अलंकृत किया गया था। परिषद् के सदस्यों ने विश्वविद्यालय की संस्तुति, यहां के परिवेश, शैक्षिक वातावरण, शुद्ध पर्यावरण, बृहत् पुस्तकालय तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर के संग्रहालय आदि से प्रभावित होकर की थी। विश्वविद्यालय की सभी उपाधियां भारत सरकार, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा मान्य हैं। यह विश्वविद्यालय भारतीय विश्वविद्यालय संघ (AIU) तथा कामनवैल्थ विश्वविद्यालय संघ का सदस्य है।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने लार्ड मैकाले की शिक्षा-व्यवस्था को उखाड़ फेंकने के साथ ही भारत की शिक्षा व्यवस्था को सुदृढ़ किया था। महर्षि दयानन्द सरस्वती तथा आर्यसमाज का योगदान भारत के नवजागरण में सदैव अग्रणी रहेगा।

कीमती दाने

एक बार सम्राट विक्रमादित्य अपने मंत्री के साथ कहीं जा रहे थे। उनके आगे-आगे एक किसान बैलगाड़ी पर धान की बोरियां रखकर अपने घर जा रहा था उसकी किसी बोरी में कहीं छेद था, जिससे धान के कुछ दाने रास्ते में गिरते जा रहे थे। सम्राट ने दाने देखकर कहा, 'रथ रोको। रास्ते में हीरे बिखरे हैं। मंत्री ने चारों तरफ देखा, फिर बोला, महाराज यहाँ तो कहीं हीरे दिखाई नहीं पड़ते। आप को भ्रम हुआ है।' लेकिन सम्राट रथ से उतरे और धान के एक-एक दाने को चुन-चुन कर अपने साफे में रखने लगे। मंत्री को आश्चर्य हुआ। उसने कहा, 'राजन् हमारे खाद्य भण्डार अनाज से भरे पड़े हैं। राज्य में अनाज की कोई कमी नहीं है। आप ऐसा क्यों कह रहे हैं?

विक्रमादित्य बोले, 'यह धान का दाना नहीं, हीरे के कण हैं। यदि हम एक-एक दाने का अनादर करने लगेंगे तो एक दिन वह समय भी आ सकता है जब हमारे खाद्य भंडार खाली हो जाएं। मंत्री बोला, महाराज, लेकिन एक-एक दाने से कोई फर्क पड़ने वाला नहीं है। इतने अनाज तो किसान के खेत में गिर कर सड़ जाते हैं।' विक्रमादित्य बोले, ये धान के दाने नहीं अन्नपूर्णा हैं। अन्नपूर्णा को पैरों के तले इसी तरह रौंदा गया तो एक दिन हम अन्न को तरस जाएंगे।

जिस तरह एक-एक बूंद से समुद्र भरता है, उसी तरह एक-एक दाने के संरक्षण से ही हमारे अन्न के भंडार भरते हैं। मंत्री और सम्राट की बातचीत किसान के कान में पड़ी। वह अपनी बैलगाड़ी रोककर सम्राट के पास आया और बोला, 'राजन् हम किसान हैं और अन्न से ही हमारी पहचान है लेकिन हम अनाज का मूल्य नहीं समझते क्योंकि हमारी सोच अपने परिवार तक सिमटी हुई है। लेकिन आप राज्य की जनता की भूख की पीड़ा समझते हैं, इसलिए आपको एक-एक दाने की कीमत मालूम है।' किसान ने सम्राट से क्षमा मांगी।

मुख्य अतिथि डॉ. अमिता चौहान, चेयरपर्सन, एमिटी शिक्षण संस्थान का वार्षिकोत्सव के अवसर पर अधिकारियों द्वारा सम्मान

मुख्य अतिथि डॉ. अमिता चौहान, चेयरपर्सन, एमिटी शिक्षण संस्थान वार्षिकोत्सव में उपस्थित लोगों को सम्बोधित करती हुयी

स्वामी विश्वानन्द जी का सम्मान

माता नारायणी देवी पुरूष्कार से श्रैष्ठ विद्यार्थी धनंजय का सम्मान करतें हुये वीरप्रताप अरोड़ा जी

आचार्य कर्णदेव शास्त्री उद्‌बोधन देते हुये

श्रीमती आदर्श बिश्नोई का सम्मान

माता अन्नपूर्णा धवन का सम्मान

स्व० आचार्य भवानीदास स्मृति पुरुस्कार से उनके सुपुत्र श्रीकृष्ण द्वारा आचार्य विष्णुमित्र वेदार्थी का अभिनन्दन

माता सावित्री छावड़ा जी का सम्मान

श्रीमती गायत्री मीना जी का सम्मान

डॉ० ओ०पी० बत्रा जी का सम्मान

मुख्य समारोह में उपस्थित जन समूह

आचार्य डॉ० जयेन्द्र जी का सम्मान करते
संस्था के प्रधान एवं मन्त्री जी

स्व० माता लक्ष्मी देवी स्मृति पुरूस्कार से उनके सुपुत्र
श्रीकृष्ण द्वारा भजनोपदेशक श्री रामरख जी का अभिनन्दन

श्री कपूर जी का सम्मान

ध्वजारोहण समारोह

ध्वजगान करते हुए ब्रह्मचारी

माता जगिया का वार्षिकोत्सव के अवसर पर अधिकारियों द्वारा सम्मान

श्री प्रवीण आर्य का सम्मान

सत्संग भवन में श्रोता एवं ब्रह्मचारी

राष्ट्रभक्ति एवं क्रांतिकारी गीतों के कार्यक्रम में अतिथियों का सम्मान

राष्ट्रभक्ति एवं क्रांतिकारी गीतों के कार्यक्रम में उपस्थित ब्रह्मचारी

राष्ट्रभक्ति एवं क्रांतिकारी गीतों के कार्यक्रम में अतिथियों का सम्मान

मुख्य वैदिक प्रवक्ता आचार्य विष्णुमित्र वेदार्थी द्वारा उद्बोधन

महिला सम्मेलन का संयोजन करते हुए मन्त्रिणा श्रीमती मधु भसीन

भजनोपदेशक श्री भूपेन्द्र आर्य क्रांतिकारी गीत प्रस्तुत करते हुए

क्रांतिकारी गीतों का श्रवण करते हुए ब्रह्मचारी

॥ भारतीय संस्कृति ॥

आर्य कै० अशोक गुलाटी

महामन्त्री

आर्यसमाज एवं आर्ष गुरुकुल वानप्रस्थाश्रम, नोएडा

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृतियों में से एक है। हमारे आदि ग्रन्थ वेद में स्वयं यह उद्घोष है–

सा प्रथमा संस्कृति विश्ववारा॥ यजु० 7।14

संस्कृति शब्द का अर्थ संस्कार है जो 'संस्कृत' से ही जुड़ा है (सम्+वृ+ति) अतः मनुष्य की श्रेष्ठ या उत्तम कृति संस्कृति है। मानव के जो आदर्श उसे सुसंस्कृत बनाते हैं वे ही संस्कृति के मूल तत्त्व हैं। मनुष्य के दोषों का संशोधन करके उसकी चित्तवृतियों का परिष्कार करने वाले उपायों का नाम संस्कृति है। अपनी उत्कृष्ट विशेषताओं के कारण आज भी भारतीय संस्कृति विश्व में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। भारतीय संस्कृति विश्व जनीन संस्कृति कही जाती है। अपनी उत्कृष्ट विशेषताओं के कारण इतने काल बीत जाने के बाद भी भारतीय संस्कृति ही मूल रूप से वैदिक संस्कृति है। आचारों और विचारों का समन्वय ही वैदिक संस्कृति का जीवन रहा है। यहाँ भोग और त्याग, धर्म और अर्थ, प्रेय और श्रेय, अभ्युदय और निःश्रेयस, भौतिकता एवं आध्यात्मिकता का संतुलित समन्वय ही जीवन का आदर्श माना गया है। आज की एकांगी सभ्यता की अन्धी दौड़ को रोकने के लिये भारतीय संस्कृति की समन्वय भावना का पुनः प्रचार होना अत्यन्त आवश्यक है। हमारा कर्त्तव्य है कि संस्कृत एवं संस्कृति के विशाल वैभव को जन-जन तक पहुंचाने का शुभ संकल्प लें। जिन परिष्कृत भावनाओं और संस्कारों के आधार पर समाज में मनुष्य अपने व्यवहार से उदाहरण प्रस्तुत करता है, जिसमें व्यक्ति का केवल अपना स्वार्थ सिद्ध न होकर मानवमात्र का और यथा सम्भव प्राणीमात्र का हित हो, इन विचार परम्पराओं का नाम ही संस्कृति है। अपनों के लिए व्यक्ति अपने स्वार्थ की उपेक्षा करके त्याग करने को उद्यत हो जाता है। इस त्याग के परिणामस्वरूप हुई अपनी हानि से और दूसरे के लाभ से उसे दुःख न होकर सुख होता है।

उदात्त मानवीय गुणों से अनुप्राणित कोई भी समाज और राष्ट्र सुसंस्कृत और महान कहलाता है। समाज और देश की उन्नत और अवनत दशा का एक ही मापदण्ड है और वह है संस्कृति! संस्कृति की अतिरिक्त परिभाषा के आधार पर जब तब वैदिक संस्कृति से अनुप्राणित भारत के अतीतकाल को देखते हैं, तो स्वाभिमान से मस्तक उन्नत हो जाता है। वैदिक संस्कृति से जीवन-यापन का जो उच्च आदर्श रखा है, वह संसार को स्वर्गधाम बनाने वाला है।

धर्म का वास्तविक स्वरूप

श्रीमती गायत्री मीना
प्रधाना, महिला समाज नोएडा

धर्म मानव जीवन का महत्त्वपूर्ण अंग है जिसके बिना मनुष्यता जीवित नहीं रह सकती, समाज भी जीवित नहीं रह सकता। जिसके बिना हमारा व्यवहार या व्यापार कुछ भी काम का नहीं रह जायगा। इसीलिए धर्म की जीवन में बहुत आवश्यकता है। प्रत्येक वस्तु का अपना एक धर्म है, पानी का भी एक धर्म है शीतलता देना, तृप्ति देना, गीला करना। अगर पानी उसको छोड़ दे तो फिर पानी का अस्तित्व नहीं बचता। मनुष्य भी जब अपने धर्म में स्थिर रहता है, मानवीय गुणों से युक्त रहता है, तभी वह मनुष्य कहलाता है। यदि मनुष्य मानवीय गुणों को छोड़ देता है तो फिर वह मनुष्य नहीं पशु कहलाता है

शास्त्रकारों ने कहा है-

> आहार निंद्रा भय मैथुनं च सामान्यमेतत् पशुभिर्नराणां
> धर्मो हिते समाधिको, विषयो, धर्मेण हीनः पशुभिः समानः।

अर्थात, पशु एवं मनुष्य में चार चीजें समान हैं आहार अर्थात भोजन, निंद्रा सोना भय, तथा बलवान से डरना और मैथुन अर्थात् संतान उत्पन्न करना। धर्म ही एक विशेष गुण है जो मनुष्य की पहचान है। धर्म से रहित मनुष्य पशु के समान है।।

धर्म शब्द "धृ" धातु से मनिन् प्रत्यय लगाकर बना है, जिसका अर्थ धारण करना है। यह सबको धारण करता है।

कहा भी गया है कि-

> धारणा धर्म मिथ्याहुः धर्मोधारयते प्रजाः
> यस्य धारणा संयुक्तः स धर्मः इति निश्चयः।।

अर्थात धर्म वही है जो पक्षपात रहित, न्यायाचरण सत्य भाषण आदि युक्त ईश्वर आज्ञा वेदों से अविरुद्ध है तथा जिसे हम धारण करते हैं और जो हमें धारण करता है उसे धर्म कहते हैं। धर्म कभी धर्मों से अलग नहीं होता, जैसे अग्नि का धर्म प्रकाश एवं गर्मी है, जब तक प्रकाश और गर्मी अग्नि में है तब तक उसका अस्तित्व है, जैसे ही प्रकाश और गर्मी अग्नि से अलग हो जाएं तो अग्निं का धर्म समाप्त हो जाएगा जिससे समस्त संसार का कल्याण हो।

महर्षि मनु तो स्पष्ट ही उद्घोषणा करते नहीं थकते कि-

> यतो धर्मस्ततो जयः (जहां धर्म है वहीं विजय है)
> आचारः परमो धर्मा (आचार सर्वोत्तम धर्म है)
> वेदो अखिलो धर्ममूलम् (वेद धर्म के मूल हैं)
> धर्मस्य त्रयः स्कन्धः यज्ञो दानं तपः (धर्म के तीन स्कन्ध हैं यज्ञ, दान और तप)

मनुष्य मात्र के लिए जो कुछ भी हितकारी मंगलकारी है, वह सब वेदों में वर्णित है, तभी तो कहा गया है कि धर्म सर्वस्व धर्म का सार रहस्य वेदों में निहित है। यही नहीं बल्कि आत्मज्ञान के अध्यात्म विद्या के मूल स्रोत वेद ही है। इसी बात को ध्यान में रखकर हमारे अचार्यों ने धर्म का निरुपण किया है। और इस बात पर भी जोर दिया है कि धर्म द्वारा ही सब कुछ प्राप्त हो सकता है। धर्म हीन समाज की अवस्था उसी प्रकार की है जैसे मझधार में पड़ी हुई नाव की होती है इसीलिए संसार में जितने भी कर्म हैं सभी का धर्म में समावेष है मानव प्रकृति दुर्बल है। उसमें कामनाओं का समावेष होकर विराट रुप धारण करना सरल है। ये ही कामनाएं जितनी तीव्र होती जाती हैं उतना ही मनुष्य का लक्ष्य भ्रष्ट कर देती हैं अतः इन कामनाओं का विराट रूप ना हो सके, नियमित ही रहे या प्रकृति के धर्म को नियमित करने के लिये ही धर्म की सृष्टि हुई है। इसलिये धार्मिक नियम ऐसे बनाये गये हैं जो लोक

हितकर हों, और जिनसे मानव समाज का कल्याण हो। धर्म शब्द की ध्वनि कान में पड़ते ही हमारे मन में यह बात उत्पन्न होती है कि धर्म वही है जिसके द्वारा हम स्वर्ग प्राप्त कर सकते हैं।

दर्शन शास्त्रों में धर्म की भिन्न-भिन्न परिभाषा की गई है-

"यतोऽभ्युदय निःश्रेयसः सिद्धि स धर्मः"।।
वैशेषिक दर्शन

अर्थात् जिन शुभ कर्मों से इस लोक में मनुष्य की सब प्रकार की उन्नति हो, जिनसे दुःखों की निवृत्ति हो, वह धर्म है।

श्री व्यास जी ने इसे और भी स्पष्ट कर दिया है-

श्रूयतां धर्म सर्वस्वं श्रुत्वा चैवावधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेशां न समाचरेत्।।

धर्म को समझो, फिर से उसे धारण करो। जो व्यवहार अपने विरूद्ध हो, उसे दूसरों के साथ मत करो। इस प्रकार धर्म की सभी परिभाषायें अविरूद्ध हैं, परन्तु संसार में अविद्या फैल जाने से मतों, सम्प्रदायों को ही धर्म समझ लिया गया है। जिससे मनुष्य धर्म के नाम से अधिक भागों में बंट गये हैं और परस्पर शत्रु बनकर हिंसा कर रहे हैं। इस कारण विश्व के बहुत से मनुष्य धर्म से ही घृणा करने लगे हैं। वस्तुतः धर्म और मत (मजहब) में भारी अन्तर है। मत का प्रवर्तक कोई मनुष्य होता है और धर्म ईश्वरीय विधान का नाम है।

आज विश्वशान्ति के लिये एक ऐसे धर्म की आवश्यकता है, जिससे कोई भी मतवादी विरोध न कर सके। ऐसे धर्म का उल्लेख मनु महाराज ने किया है, जो लोक विख्यात है।

धृतिः क्षमा दमो अस्तेयं शौचमिद्रिय निग्रहः
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणं।।

प्रथम संविधान निर्माता, धर्म तत्व के मर्मज्ञ, महान समाज शास्त्रि, वेदज्ञ, मानवता के आधार स्तंभ मनुस्मृति के रचयिता महाराज मनु ने धर्म के दस लक्षण बताए हैं। जिनका पालन करना मनुष्य मात्र के लिए आवश्यक है।

धृति :- अच्छे कार्य करते हुए आनेवाली विपत्तियों में न घबराना।

क्षमाः- किसी निर्बल के अपराध करने पर दण्ड देने की शक्ति के होने पर बदला लेने की भावना का त्याग करना। क्षमा वीरस्य भूषणं क्षमा वीरों का भूषण हैं।

दमः- मन को सदा धर्म में प्रवृत्त रखते हुए अधर्म में जानेवाले मन की वृत्ति को रोकना।

अस्तेयः- चोरी त्याग अर्थात बिना आज्ञा व छल कपट व विश्वासघात व किसी व्यवहार तथा वेदविरुद्ध उपदेश से पर पदार्थ का ग्रहण करना चोरी और उसको छोड़ देना अस्तेय कहलाता है।

शौचः- शरीर, मन, आत्मा तथा बुद्धि को मैल से बचाना, जल से शरीर की शुद्धता, विद्या तथा तप से आत्मा की शुद्धता, वेदादी शास्त्रों के ज्ञान से बुद्धि की शुद्धता बढ़ती है।

इंद्रिय निग्रहः- सांसारिक विषय, वासनाओं से अपनी इन्द्रियों तथा मन को हटाकर शुभ कार्य में लगाना।

धीः- वेदादि सत्-शास्त्रों के अध्ययन एवं स्वाध्याय से बुद्धि (ज्ञान) की वृद्धि करना।

विद्याः- पराः जिससे अक्षर (अविनाशी) ब्रह्मा को जाना जाता है। अपराः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द तथा ज्योतिष विद्या को जानकर उससे जीवन सार्थक बनाना।।

सत्यः- जो पदार्थ जैसा है, उसको वैसा ही कहना, लिखना तथा मानना।

अक्रोधः- क्रोध से मानव-जीवन नष्ट होता है, अतः क्रोध न करना।

मनु महराज नीति नियम और विधान के निर्माता थे। ये धर्म के लक्षण ऐसे हैं। जिनमें किसी भी जाती या सम्प्रदाय को आपत्ती नहीं हो सकती, मनुष्य जाती के स्वभाविक धर्म हैं। मनुष्य में मनुष्यत्व का विकास इन्हीं धर्मों का पालन नहीं करता, तो वह अधोगति को प्राप्त होता है। धर्म का अन्यत्र भी लक्षण है।

आचारः परमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मृति एव च।
तस्यादस्मिन् सदा युक्तो नित्यं स्यादात्मवाद्रिजः।।

अर्थात् श्रुति और स्मृतियों में भी आचार को ही परम धर्म कहा है। जब तक मनुष्य जाति में इन धर्मों की प्रधानता रही, तब तक हमारे देश में सुख एवं शांति का साम्राज्ञ रहा और जब से हमारा देश इनसे विमुख हुआ, तभी से हमारे देश में अशांति का सम्राज्ञ हो गया।

आज देश में धर्म का ह्रास हो जाने के कारण मनुष्य हिंसक पशुओं के समान खुंखार बनकर एक दूसरे का रक्त चूस रहे हैं। आज हम यह भूल गए हैं कि धर्म ही मनुष्य जीवन का आधार है और धर्म ही मरने पर साथ जाता है। यदि हम धर्म को अलग निकाल दें, तो समस्त संसार का ढांचा ही बदल जाएगा।।

इन सारी कसौटियों पर केवल "वैदिक धर्म" ही खरा उतरता है। अतः वही सार्वभौम धर्म है।

विद्या धर्मेण शोभतेः- विद्या धर्म से शोभा देती है इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मनुष्य के समस्त सुखों का आधार, ऐच्छिक एवं पारलौकिक उन्नति का साधन धर्म ही है। धर्म का मूल विनय है। विनय के द्वारा ही मनुष्य बड़ी जल्दी शास्त्र ज्ञान तथा कीर्ती सम्पादन करता है। और अंत में निश्रेयस मोक्ष भी उनके द्वारा प्राप्त होता है।।

अपना मोल

एक कुम्हार घड़ा बना रहा था। पास ही कुछ सुराहियाँ, दीपक, मूर्तियाँ और गुल्लकें बनी रखी थीं। ये सभी आपस में बात कर रहे थे। घड़े ने दीपकों से कहा- "तुम सभी कितने सुन्दर हो, अलग-अलग आकृतियों में। एक हम हैं....... सब के सब मोटे-मोटे। जरा सा ढलक जाएं तो टूट ही जाएं।"

एक दीपक बोला-"अरे कहाँ, घड़े काका। हमारा आकार तो देखो आपके आगे कितना छोटा है। किसी के सामान के पीछे कब दबकर टूट जाएं, पता भी न चले। ये मूर्तियाँ हमसे कहीं ज्यादा सुन्दर हैं। काश, हम भी मूर्ति होते।" दीपक और घड़े की बातें सुनकर मूर्तियां भी उदास हो गईं। एक मूर्ति बोली- "भैया, ये आप क्या कह रहे हैं! आपको नहीं पता के हमें इस आकार को पाने के लिए कितनी तकलीफ सहनी पड़ती है। अपने अंगों को जगह-जगह से सुडौल आकार देने की खातिर कितने कष्ट उठाने पड़ते हैं। हमें तो गुल्लक बनना पसंद था। काश हम गुल्लक होतीं तो सब हमारे भीतर खूब सारे पैसे रखते।" गुल्लकें काफी देर से सबकी बातें सुन रहीं थीं, वे भी विचलित हो उठीं। एक गुल्लक तो विफर ही पड़ी और बोली "आप हमारे दर्द को नहीं समझ पाएंगे। लोग हमारे भीतर अपनी सबसे प्रिय वस्तु 'पैसा' संचित करते हैं ताकि वह इधर-उधर न पड़े रहें, लेकिन इसी पैसे की खातिर निर्ममता से पटककर फोड़ देते हैं। अब आप ही बताइए, क्या आपको कोई ऐसे तोड़ता है?"

कुम्हार का चाक अपना काम करते हुए इन सभी की तकलीफें सुन रहा था। उसने घड़े को समझाया-"तुम बहुत ही उपयोगी हो। अपने शीतल जल से तमाम लोगों की प्यास बुझाते हो, और कुछ लोग तो हमारे भीतर अपना अनाज तक रख लेते हैं।" फिर वह दीपक से बोला-"तुम आकार में बेशक छोटे हो, लेकिन तुमसे प्रकाश फूटता है। तुम मंदिरों में जगह पाते हो। घरों और देहरियों को जगमगाते हो। इसलिए तुम मंदिरों की शोभा बढाती हो।" आखिर में उसने गुल्लक की ओर बड़े प्यार से देखते हुए कहा- "तुम्हारी शोभा इसलिए है कि तुम इतनी तकलीफ सहती हो। इसलिए तुम घरों मंदिरों की शोभा बढ़ाती हो।" आखिर में उसने गुल्लक की ओर बड़े प्यार से देखते हुए कहा- "तुम सभी बहुत कीमती हो। तुम बच्चों की खुशी हो। तुम लोगों के बुरे वक्त में उनके काम आकर उनका जीवन सार्थक कर देती हो।"

इस तरह चाक उन चीजों के साथ-साथ इंसानों को ये भी सीख दे गया कि अपने गुणों को पहचानते हुए खुद का भी सम्मान करना चाहिए। दूसरे के गुणों को पहचानते हुए खुद का भी सम्मान करना चाहिए। दूसरे गुणों के साथ अपनी तुलना करके बेवजह खुद को कमतर नहीं आंकना चाहिए। अपनी-अपनी जगह पर हम सभी उपयोगी हैं। हमें अपना मोल खुद पहचानना चाहिए।

॥ अपघ्नन्तो अराव्णः ॥

संकलनकर्त्ता
श्रीमती आदर्श बिश्नोई

जागरूक नवयुवाओं,

आओ! इस संस्कृति को नरक होने से बचा लें।
चेतना का, जागरण का, एक नया गीत गा लें।।

आज समाज में चारों ओर भय, आतंक, हिंसा व्याप्त है। कुछ स्वार्थी तत्व राष्ट्रीय सामाजिक हितों को नष्ट कर रहे हैं। आप प्रतिदिन कोई न कोई ऐसी घटना समाचारों में पढ़ते सुनते हैं जिसमें नवयुवक, नवयुवतियों को बहला फुसलाकर, लालच देकर, भ्रमित करके, पहचान छुपाकर विवाह करके उनका धर्म परिवर्तन किया जा रहा है। यह एक छद्‌म साजिश है।

बांटो, लड़वाओ और राज करो की नीति से 1947 में देश का विभाजन हुआ था। कुछ नेता और बुद्धिजीवी एक ओर यह भी कहते रहे कि राज करो की नीति से 1947 में यह भी कहते रहे कि साम्प्रदायिकता से मुक्ति पाने के लिए मजहब के आधार पर भारत विभाजन ही समस्या का हल है। चलिये विभाजन हो गया, तो अब देश में मजहबी उन्माद और संकीर्णता की प्रेरक ताकतें क्यों सक्रिय हैं, क्यों समान नागरिक कानून को भी वे पथ निरपेक्ष भारत में मानने को तैयार नहीं।

आज देश की प्राचीन गरिमामयी संस्कृति, सभ्यता, आज समाज में न धन सुरक्षित है न तन और न ही चरित्र। आज हमारी संस्कृति पर, सभ्यता पर, हमारे धर्म पर नई-नई साजिशों से हमला हो रहा है जिसका समय रहते प्रतिकार न किया गया तो यह एक नासूर बनकर सदियों सालता रहेगा। आने वाली संतति हमसे पूछेगी - ऐसा क्यों हुआ? तो क्या कहोगे? कि हम बड़े उदारवादी हैं। हम शराफत की, धर्म निरपेक्षता की चादर ओढ़कर सो रहे थे, इसलिए जिसको जो मिला वो उठाकर ले जाता रहा। इसलिए जगो, स्वयं को पहचानो, आप महान् ऋषि-ऋषिकाओं की सन्तान हैं। आपने उस पवित्र भूमि में जन्म लिया है, जहाँ श्रीराम, श्रीकृष्ण, महाराणा प्रताप, शिवाजी अनेक देशभक्तों, वीरों-वीरांगनाओं ने जन्म लिया है, जो अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करते रहे आप में उनका तेज है इसलिए कोई विरोधी ताकत आपको झुका नहीं सकता।

संगठित हों- भौगोलिक सीमाओं के साथ-साथ अपने धार्मिक और सामाजिक मूल्यों की रक्षा हमारा और आपका नैतिक उत्तरदायित्व है। आप सब बालक, किशोर और युवामन सावधान और जागृत होंगे तो राष्ट्र सुरक्षित होगा। आपको बौद्धिक और मानसिक रूप से मजबूत होना है और जन-जन को चेताना है। समाज शक्तिशाली तभी बनता है, जब सब एक हो मिलकर प्रयत्न करें। जैसे तिनका-तिनका मिलकर मजबूत रस्सी बन जाती है। दृढ़ संकल्पी लोगों का छोटा समूह भी इतिहास बनाया करता है।

जागरूक बनें- आप में व्यक्तिगत उन्नति के साथ सामाजिक जागरूकता भी हो। नैतिक ज्ञान हो, जीवन के प्रत्येक पहलू को जानें समझें आचरण करें। अपने धर्म के प्रति श्रद्धा हो। आपने देखा होगा अन्य मतावलम्बी चाहे वो ईसाई हो, मुस्लिम हो या कोई अन्य सबमें अपने धर्म के प्रति निष्ठा है। ईश्वरोपासना के लिये वे नियमित हैं, सारे लोग संगठित होकर या व्यक्तिगत रूप में भी समय होने पर सब काम छोड़कर उपासना करते हैं। एक छोटा बालक भी अपने रीति-रिवाज, मजहब, आचार-विचार को जानता है और मानता है। उन्हें यह प्रारम्भ से ही सिखाया जाता है। ये माता-पिता का, परिवार का कर्तव्य है कि प्रारम्भ से बालकों को शिक्षित करें। धर्म के प्रति श्रद्धा जगायें। केवल शिक्षा से काम नहीं चलेगा उसको कर्म में आचरण में भी

उतारना है। हम लोग कहते हैं, समय नहीं मिलता, जैसे अन्य कार्यों के लिए समय निकालते हैं ऐसे ही परिवार सहित साप्ताहिक सत्संगों में तो जाना ही चाहिए। इससे अपने धार्मिक मूल्यों का ज्ञान होता है और संस्कार भी बनता है। अन्य नैतिक और चारित्रिक बातों से व्यक्तित्व का विकास होता हे। मेरा धर्म, मेरी संस्कृति श्रेष्ठ है इसलिए कोई ताकत मुझे छल नहीं सकती, बदल नहीं सकती मैं किसी बहकावे में नहीं आ सकता/सकती।

अपने ऊंचे लक्ष्य प्राप्त करें– कुछ और जरूरी बातें जो आपको समझनी चाहिए कि प्रेम-प्रपंच का जाल रचकर आजकल किशोर-किशोरियों को गुमराह किया जाता है, उससे सावधान रहना है। आपकी ये उम्र जीवन में कोई लक्ष्य प्राप्त करने की है। भावनाओं में बहकर कर्तव्य को भूलने की नहीं। ये रूमानी दुनिया में खोकर अपने भविष्य को बर्बाद करने जैसा है। कहते हैं- "Prevention is better than cure" अर्थात् ऐसी नौबत ही क्यों आये जब झूठी भावनाओं में बहकर समाज में तमाशा बन जाये। प्रेम या प्रेम विवाह भी भली प्रकार जाने परखे बिना करना भारी मूर्खता है। माता-पिता से बढ़कर कोई हितैषी नहीं होता, उन्हें ही अपना सच्चा दोस्त बनायें। अपनी समस्याऐं उनसे ही बाँटें।

बहन बेटियों को भी अपने को समझदार, समर्थ और सुरक्षित रखना है। आप इतनी कमजोर नहीं हैं कि कोई भी आपको बहका-फुसला ले आपका शोषण करे और आप भावुकता में बहकर सही गलत की पहचान न कर पायें। क्रूर, धोखेबाज, स्वार्थी, दरिंदों को एहसास दिलाना चाहिए कि आप कमजोर बेवकूफ नहीं। भारतीय नारी चरित्रवान है, वीरांगना है। माता के दिए संस्कार ही उसकी शक्ति है जो दुष्टों का दलन करना जानती है। जहरीले साँपों को कुचलना जानती है।

फूल नहीं चिगारी हो,
तुम भारत की नारी हो।।

समाज में दूसरों के जीवन से शिक्षा लें। इसी में बुद्धिमानी है। उत्तम संस्कार और उत्तम चरित्र सबसे बड़ी सम्पत्ति है। ये जीवन छोटे-छोटे सुखों के लिए नहीं, बडे लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए मिला है। कुछ अच्छा बनकर परिवार का, समाज का, देश का नाम ऊँचा करें। इसी में जीवन की सार्थकता है।

अस्तित्व की रक्षा - आओ! संकल्प लें अपनी संस्कृति को, अपनी सभ्यता को अपने राष्ट्र को,हिन्दुत्व को, विश्व में शक्तिशाली बनाकर चमकायें और मानवता के द्रोहियों को, मजहब के उन्मादियों को, यह अनुभूति हो सके कि भारत एक जागृत राष्ट्र के रूप में उनके मान मर्दन के लिए उपस्थित है। वह वेद की अग्नि बनकर चमकता है। रामायण से आचरण और चरित्रवान बनने की शिक्षा लेता है तो महाभारत का कर्मयोगी बनकर दुष्टों का काल बनता है।

''जागे राष्ट्र के वीर व्रती सब, पुनः भरें हुंकार।
स्वाभिमान की रक्षा के हित, कर्मयोग वृत धार।।

''जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी''

संगठित युवकों, युवतियों, अन्य सभी देश-प्रेमियों, आओ मिलकर कहें- वन्दे मातरम्-वन्दे मातरम्, जय भारत जय मातृभूमि।

अनमोल वचन

१. नजर रखो अपने 'विचार' पर
क्योंकि वे "शब्द" बनते हैं. . .

२. नजर रखो अपने 'शब्द' पर
क्योंकि वे "कार्य" बनते हैं. . .

३. नजर रखो अपने 'कार्य' पर
क्योंकि वे "स्वभाव" बनते हैं. . .

४. नजर रखो अपने 'स्वभाव' पर
क्योंकि वे "आदत" बनते हैं. . .

५. नजर रखो अपने 'आदत' पर
क्योंकि वे "चरित्र" बनते हैं. . .

६. नजर रखो अपने 'चरित्र' पर
क्योंकि इससे "जीवन आदर्श" बनते हैं!!

यज्ञ

श्री बी.एस. शर्मा

वस्तुतः यह बात निःसन्देह सत्य है कि आज विज्ञान की प्रगति से चहुं ओर प्रगति पथ पर बढ़ते जा रहे हैं। किन्तु इसके साथ-साथ यह बात भी सत्य है कि आधुनिक विज्ञान की चकाचौंध में हमारी आँखें चौंधिया सी गई हैं। पश्चिमी विद्वानों एवं अंग्रेजी साहित्य में स्व-बसे भारतीयों द्वारा दिये गये विसंगत एवं एकांगी तर्कों से आज का नव युग सुमार्ग से भटकता नजर आ रहा है। यह लोग यज्ञ को मात्र कर्मकाण्ड और घी सामग्री का दुरुपयोग करने की संज्ञा देने में जरा भी संकोच नहीं करते। बिना वैज्ञानिक परीक्षण और सोच समय के किसी बात को जाने बिना तथा बिना इस पर विचार या विश्लेषण किये बिना नकार देना हमारी संकुचित बुद्धि का ही प्रतीक है।

मानव शरीर ईश्वर की सबसे उत्तम रचना है। वह अपना स्वयं का कल्पवृक्ष स्वयं ही है। वह स्वयं ही इच्छा करता है और स्वयं से ही उसके पूरे होने का वरदान मांगता है, और ये बात विवेकी मनुष्य जानते हैं कि आदमी जो भी चाहे अपने आप को दे सकता है। बस पहचानने की देर है। वह अपने अन्दर स्थित कल्पवृक्ष को पहचान ले। हम जीवन में तनाव के दौर से गुजरते रहते हैं। विज्ञान ने भी प्रमाणित कर दिया है कि तनाव हमारे सभी दुःखों व बीमारियों की जननी है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि हम ऐसा मार्ग अपनायें जिससे हमारे मस्तिष्क और शरीर पर पड़ने वाले तनाव और शरीर पर पड़ने वाले उसके प्रभाव को दूर किया जा सके। इस संबंध में अनेक विधियों का उल्लेख मिलता है। जिसमें से यज्ञ का एक विशेष स्थान है।

यज्ञ का अभिप्राय मानव के सर्वश्रेष्ठ कर्म से अपेक्षित है। इसका अर्थ समुद्र की तरह बड़ा विशाल एवं विस्तृत है। व्याकरण की दृष्टि से यज्ञ शब्द की रचना यज्ञ धातु से हुई है जिसका अर्थ संगतिकरण, देवपूजा और दान होता है। गोपथ एवं शतपथ ब्राह्मणों में भी यज्ञ का वर्णन विभिन्न रूपों में मिलता है।

गोपथ में इसे मख कहा जाता है। 'म' का अर्थ नहीं है जो निषेध का वाचक है तथा 'ख' का अर्थ न्यूनता अथवा शनि अथवा अपूर्णता होता है, अर्थात् 'मख' या यज्ञ वह प्रक्रिया है जिसके करने से कोई न्यूनता ही न रहे। इस विचार से विश्व में हमारे द्वारा किया गया कोई भी कार्य अधूरा नहीं रहेगा, परिश्रम और बुद्धिमत्ता से पूर्णता को प्राप्त होगा। 'होम' पद्य एवं अग्निहोत्र का भी प्रयोग यज्ञ के लिए होता है। शतपथ में यज्ञ को ''यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म'' बताया गया है।

''ईजाना स्वर्गं यन्लिोकम्'' जिसका अर्थ है कि यज्ञ या अग्निहोत्र करने वाले अथवा यज्ञवेदी पर उपस्थित पुरुषों के मन के प्रदूषण को साथ करके यज्ञ उन्हें आध्यात्मिक उपकरण प्रदान करता है। उनके मस्तिष्क पर पड़ने वाला सारा तनाव दूर हो जाता है और शरीर प्रफुल्लित मन से आनन्द की हिलौरें लेने लगता है क्योंकि वेदमन्त्रों के उच्चारण के साथ आहुत की गयी सुन्दर-सुन्दर आहुतियाँ उनके द्वैत को दूरकर अद्वैत की ओर ले जाती है, और वे सभी भद्र पुरुष अपने आप को एक दिव्य लोक में विचरण करते हुए पाते हैं। यज्ञ हमारे जीवन तत्वों, जलवायु, आकाश पृथ्वी एवं अग्नि को प्रदूषण रहित कर सम्पूर्ण मानव जाति विनश्टियों के विरूद्ध एक सुरक्षा कवच प्रदान करते हैं।

हम सभी जानते हैं कि यज्ञ का धुँआ आकाश में जाकर बादलों का निर्माण करता है और वे बादल पृथ्वी की ओर आकर जल बरसाते हैं। जिससे अनेक प्रकार की

वनस्पतियाँ उत्पन्न होती हैं, जिसके सेवन से मानव एवं सभी जीव जन्तु परिपुष्ट होते हैं। यज्ञ के माध्यम् से वातावरण ही नहीं शुद्ध होता, अपितु वातावरण में फैली सारी गन्दगी नष्ट हो जाती है। जिससे संसार की लौकिक सुख समृद्धि उन्हें प्रगति पथ पर बढाने लगती है। यह बात विज्ञान सम्मत है। आहुति के रूप में जो कुछ दिव्य पदार्थ हम प्रज्वलित अग्नि में आहुत करते हैं। वह उसे अपने पास न रखकर सर्वसाधारण के लिए वायुमण्डल में प्रसारित कर देते हैं, और आहुत किये पदार्थों के गुणों की संख्या हजारों गुना बढ़ जाती है। जो वस्तु अग्नि के सम्पर्क में आती है वह उसे आत्मसात् करके अपने समान बना लेती है। हमें भी इसी प्रकार सभी प्राणियों को अपने समान बनाने का आदर्श प्रस्तुत करना चाहिए।

यज्ञ में प्रज्वलित अग्नि की लौ सदैव ऊपर की ओर जाती है, और नीचे नहीं आती। अतः हमें भी विषम परिस्थितियों में अपना संकल्प एवं मनोबल इसी प्रकार ऊंचा रखना चाहिए। अग्नि जब तक जीवित रहती है, अपनी उष्णता नहीं छोड़ती। उसी प्रकार हमें भी अपने जीवन में अपनी गतिशीलता और कर्त्तव्यनिष्ठा की अस्मिता को बनाए रखना चाहिए।

सूर्य, चन्द्र, अग्नि, जल एवं पवन बिना किसी भेदभाव के सभी प्राणियों के ऊपर कृपावृष्टि करते रहते हैं जिसका हमारे जीवन में निशुल्क प्रयोग हो रहा है। जो प्रकृति की स्वार्थ रहित प्रेरणा का प्रमाण है। ठीक उसी प्रकार यज्ञ से न केवल हम अपना, अपितु उन सभी प्राणियों का जहाँ तक यज्ञीय तत्त्व वायुमण्डल में प्रवेश करते हैं। उन सभी को शुद्ध वायुमण्डल एवं सुगन्धित तथा पौष्टिक द्रव्यों से युक्त आहुत की गई सामग्री की आहुतियों से कल्याणकारक बनाते हैं। जिससे शुभ कर्म और सदाचार का जन्म होता है और यज्ञ के द्वारा हम ऋग्वेद की निम्न प्रार्थना को चरितार्थ करते हैं।

''आ न भद्राः क्रतवो यन्तु विष्वतः'' अर्थात् हममें सब ओर से शुद्ध विचारों का आगमन हो। इसका आगमन सदाचार तथा विश्व से विश्व मानव के कल्याण का पथ प्रशस्त होगा। अतः हमें यज्ञ को अपने जीवन का अनिवार्य अंग बनाना चाहिए क्योंकि जीवन के लिए जितनी भोजन की दैनिक आवश्यकता है उतना ही दैनिक यज्ञ हमारे लिए आवश्यक है। ●

''विश्ववारा संस्कृति''

१. सभी धार्मिक सामाजिक पत्रों की अपेक्षा अधिक संख्या में प्रकाशित होने वाली पत्रिका।

२. वर्ष में १२ अंक प्राप्त करें ।

३. ''विश्ववारा संस्कृति'' का वार्षिक सदस्यता शुल्क २५० रू० है। और आजीवन सदस्यता शुल्क २५०० रू० है।

४. ''विश्ववारा संस्कृति'' का विदेश में वार्षिक सदस्यता शुल्क ३१०० रू० है।

५. लेखक अपने विचार, लेख, कविता आदि प्रकाशन सामग्री प्रत्येक मास की २-४ तारीख तक भेज दिया करें।

६. जिस मास से शुल्क भेजेंगे तभी से सदस्यता प्रारम्भ होगी।

७. नमूना कॉपी के लिये २०रू० का धन-आदेश द्वारा अग्रिम भेजें।

८. प्रत्येक पत्र व्यवहार में अपनी सदस्यता संख्या अवश्य लिखें और उत्तर चाहने वाले व्यक्ति दोहरा कार्ड या टिकट भेजें।

९. प्रत्येक पत्र-व्यवहार में अपना पता भी हिन्दी में साफ-साफ लिखा करें।

१०.आपके सुझाव अपेक्षित हैं।

प्रधान संपादक	: आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार
स्वामित्व	: आर्यसाज नोएडा, बी-६६ सैक्टर-३३, नोएडा २०१३०१
सम्पादन सहयोग	: श्रीमति शकुन्तला सेतिया, श्रीमति गायत्री मीना, श्रीमति आदर्श विश्नोई, श्रीमति मधु भसीन
विज्ञापन दर	: कवर पृष्ठ २ व ४ - ५००० रूपये कवर पृष्ठ ३ - ४००० रूपये अन्दर पूरा एक पृष्ठ - ३००० रूपये अन्दर १/२ पृष्ठ - २००० रुपये

नोटः पूरे वर्ष (१२ अंक) के लिए विज्ञापन देने पर पचास प्रतिशत की छूट दी जायेगी। यह पत्रिका भारत के अनेकों प्रदेशों तथा विदेशों में भेजी जाती हैं। विज्ञापन देकर तथा दिलवाकर लाभ प्राप्त करें तथा पत्रिका को आत्मनिर्भर होनें मे सहयोग प्रदान करें। ''विश्ववारा संस्कृति''में छपे लेखों तथा विचारों से संपादक मंडल का सैद्धान्तिक मतैक्य होना आवश्यक नहीं हैं। न्याय क्षेत्र उत्तर प्रदेश होगा।

''विश्ववारा संस्कृति'' के सदस्य बनकर सहयोग करें

संरक्षक सदस्य : ५१०० रू०

आजीवन सदस्य : २५०० रू०

प्रबन्ध सम्पादक

"विश्ववारा संस्कृति" के नियम व सविनय निवेदन

१. यदि 'विश्ववारा संस्कृति' १५ दिनांक तक नहीं पहुँचती है तो आप प्रधान सम्पादक के नाम से पत्र डालें। पत्र मिलते ही 'विश्ववारा संस्कृति' पुनः भेज दी जायेगी।

२. वार्षिक शुल्क तथा आजीवन शुल्क मनीआर्डर द्वारा आर्यसमाज बी-६६, सैक्टर-३३, नोएडा के नाम भेजें। वी०पी० रजिस्ट्री द्वारा नहीं भेजा जायेगा।

३. लेख सम्पादक 'विश्ववारा संस्कृति' के नाम भेजें, लेख छोटे, सरल संक्षिप्त होने चाहिए तथा स्पष्ट, शुद्ध, एवं सुन्दर लेख में कागज के एक ओर लिखे होने चाहिए।

४. 'विश्ववारा संस्कृति' में विज्ञापन भी दिये जाते हैं, परन्तु विज्ञापन शुद्ध एवं वास्तविक वस्तु का ही दिया जायेगा।

५. यह 'विश्ववारा संस्कृति' पत्रिका समाज-सुधार की दृष्टि से मानव कल्याणार्थ निकाली जाती है। इसमें आपको धर्म, यज्ञ कर्म, समाज सुधार, देश व समाज की स्थिति, ब्रह्मचर्य, स्वास्थ्य, योगासन, सदाचार, संस्कार, नैतिकता, वैदिक विचार, शिक्षा आदि एवं अन्य ऐसे विषयों पर लेख पढने को मिलेंगे।

६. 'विश्ववारा संस्कृति' के दस ग्राहक बनाने वाले सज्जन को एक वर्ष तक निःशुल्क 'विश्ववारा संस्कृति, भेजी जायेगी तथा पचास ग्राहक बनाने वाले सज्जन को दो वर्ष निःशुल्क पत्रिका भेजी जायेगी तथा उसका फोटो सहित जीवन-परिचय 'विश्ववारा संस्कृति में निकाला जायेगा।

७. अन्य पत्र-पत्रिकाओं में पहले छपा हुआ लेख 'विश्ववारा संस्कृति' में नहीं छापा जायेगा।

८. अनाधिकृत रूप सं लिए लेख, रचना, कविता के लिए प्रेषक ही उत्तरदायी होंगे।

'विश्ववारा संस्कृति"
आर्य समाज, बी-६९, सेक्टर-३३, नोएडा (उ.प्र.)
संपर्क सूत्र : ०१२०-२५०५७३१, ९८७१७९८२२१, ९५५५७७९५९१
ई-मेल : infoaryasamajnoida33@gmail.com

आर्य कै. अशोक गुलाटी
प्रबन्ध सम्पादक

अच्छा सीखें

१. बोल सको तो मीठा बोलो,
कटु बोलना मत सीखो।
२. जला सको तो दिये जलाओ,
दिलो को जलाना मत सीखो।
३. मिटा सको तो क्रोध मिटाओ,
प्रेम मिटाना मत सीखो।
४. बिछा सको तो फूल बिछाओ,
शूल बिछाना मत सीखो।
५. लगा सको तो बाग लगाओ,
आग लगाना मत सीखो।
६. कर सको तो काम करो,
नाम करना मत सीखो।
७. कर सको दान करो,
जान लेना मत सीखो।
८. सीखों तो कुछ ऐसा सीखो,
लाखों में तुम एक दिखो।
९. क्या मार सकेंगी मौत उसे,
औरों के लिये जो जीतें है।
१०.मिलता हैं दुनिया का प्यार उसे
औरों के जो आंसू पोंछते हों।।

आर्य समाज नोएडा का भव्य वार्षिकोत्सव

आर्यसमाज नोएडा, आर्ष गुरूकुल नोएडा एवं वानप्रस्थाश्रम के तत्त्वावधान में वार्षिक महोत्सव का आयोजन ७ से ११ दिसम्बर तक किया गया। जिसमें आर्ष गुरूकुल नोएडा के प्राचार्य डॉ. जयेन्द्र जी के ब्रह्मत्व में प्रतिदिन महायज्ञ किया गया। आचार्य जी ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि हवन में वेद मंत्रों के बोलनें का विधान है। वेद मंत्रों के पाठ से परमेश्वर की भक्ति होती है तथा उन मंत्रों से हवन के लाभ भी विदित होते रहते हैं। मंत्रों के पाठ से ईश्वरीय वाणी वेदों की रक्षा होती है। अतः हवन में वेद मंत्रों के उच्चारण करने चाहिए। इस प्रकार प्राचीनकाल ऋषि महर्षि राजा व महराजा बड़े-बड़े यज्ञ किया व कराया करते थे जिससे आर्यवर्त देश में सर्वत्र सुखों की वर्षा होती रहती थी। अब भी यज्ञ के करने कराने का प्रचार होकर सुखों की महान् वृद्धि हो सकती है। आचार्य जी ने यज्ञ की महत्ता का वर्णन करते हुए कहा कि जो मनुष्य प्रतिदिन यज्ञ करते हैं ईश्वर उन पर अत्यंत प्रसन्न होते हैं। अतः ईश्वर का प्रसाद प्राप्त करने के लिए प्रतिदिन यज्ञ किया जाना चाहिए।

समारोह में अनेक सम्मेलनों जैसे भ्रष्टाचार उन्मूलन सम्मेलन, सत्यार्थ प्रकाश सम्मेलन, आर्य महिला सम्मेलन आदि का आयोजन भी किया गया जिसमें श्रोताओं को वैदिक विद्वानों के प्रवचनों का लाभ मिला।

यज्ञोपरांत प्रतिदिन आचार्य विष्णुमित्र वेदार्थी जी के प्रवचनों ने श्रोताओं में ज्ञान की गंगा प्रसारित कर दी। उन्होंने कहा कि परमेश्वर की पूजा उसे कुछ पदार्थ देकर नहीं अपितु उससे लेकर होती है। सांसारिक व्यवहार में पूजा के तीन पदार्थ पूज्य, पूजक व पूजा की सामग्री होते हैं। माता-पिता व आचार्य आदि व्यवहारिक जगत में पूज्य हैं। हम जगत के माता-पिता आदि पूज्य देवों की पूजा उनकी आवश्यक्तानुसार उन्हें पदार्थ देकर व उनसे परमार्थ की शिक्षा प्राप्त करके करते हैं, किन्तु आध्यात्मिक क्षेत्र में परमेश्वर की पूजा उसे कुछ देकर नहीं होती अपितु उससे ग्रहण करके ही होती है। उन्होंने ईश्वर भक्ति के सोपान स्तुति विषय पर प्रकाश डालते हुए कहा कि किसी वस्तु का गुणगान करना उसकी स्तुति है। आध्यात्मिक जगत में परमेश्वर के नाम के जप करने में उसके अर्थ का विचार करते हुए उसे धारण भी किया जाता है। जो मनुष्य परमेश्वर के नाम का जाप करता हुआ उसके अर्थ का धारण नहीं करता उसका स्तुति करना व्यर्थ है। ऐसा करने से परमेश्वर से अत्यंत प्रेम होकर उसके गुण, कर्म व स्वभाव से अपने में पवित्रता धारण की जाती है, जब मनुष्य प्रभु की कृपा का पात्र बनता है। आचार्य जी ने कहा कि हवन के तीन तत्त्व देव पूजा, दान व संगतिकरण हैं। देव पूजा की व्याख्या करते हुए उन्होनें कहा कि जो दान करता है वह देव है। हवन में अग्नि नामक जड़ देव को घृत, रोगनाशक, आरोग्यकारक, सुगंधित व मीठे पदार्थों की आहूतियाँ दी जाती हैं। अग्नि इन पदार्थों को ग्रहण कर उन्हें सूक्ष्म करके कई गुना शक्तिकृत करके वापिस कर देता है। इससे जल वायु आदि की शुद्धि होकर मनुष्य आदि समस्त प्राणियों का उपकार होता है। उन्होंने बताया कि ऋषि दयानन्द ने आर्य समाज की स्थापना कर राष्ट्र उद्धार, समाज सुधार का महान कार्य किया। आर्य समाज द्वारा गुरूकुल, कन्या गुरूकुल, वानप्रस्थाश्रम, सन्यास आश्रम और गऊशाला व अनाथालय जैसी संस्थायें मानव उद्धार के लिए स्थापित की। ऋषि दयानन्द के इतने उपकार हैं कि हम उन्हे भुला नहीं सकते।

इस अवसर पर वैदिक विद्वान स्वामी विश्वानन्द जी ने कहा कि संसार में सभी प्राणियों में सबसे श्रेष्ठ योनी मनुष्य योनी मानी जाती है। मनुष्य बाकी प्राणियों से बुद्धि, ज्ञान, विवेक और आचरण के मामले में उत्कृष्ट है। ज्ञान, विवेक और उत्तम आचरण की शिक्षा हमें वेद से मिलती है। वेद परमात्मा की पवित्र वाणी है। अतः हमें परमात्मा की समीपता प्राप्त करने के लिए वेद का अध्ययन करना चाहिये।

वैदिक प्रवक्ता डॉ. नरेन्द्र वेदालंकार जी ने अपने उद्‌बोधन में बताया कि ऋषि दयानन्द से पहले भारतवर्ष में स्त्रियों को पढने का अधिकार नहीं था। कहा जाता था कि 'स्त्री शुद्रौ न धीयताम्' अर्थात स्त्रियों को और शुद्रों को मत पढाओ। स्त्रियों को पैर की जूती के समान समझा जाता था और कहा जाता था कि जिस नारी के संघ से अंधा होत भुजंग उनको कौन हवाल है जो नित नारी के संग। लेकिन महर्षि दयानन्द ने स्त्री को पूज्य बताया उन्होंने कहा कि 'यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता' अर्थात जहाँ नारियों का सम्मान होता है वहाँ सभी देवताओं का वास होता है। महर्षि दयानन्द ने वेदों के आधार पर कहा कि लड़कियों का पालन पोषण भी लड़कों की तरह ही करना चाहिये, इसमें भेदभाव नहीं करना चाहिये।

डॉ. कर्ण सिंह शास्त्री जी ने श्रोताओ को सम्बोधित करते हुये बताया कि जहाँ नारी की पूजा होती है वहाँ देवता निवास करते हैं। महर्षि दयानन्द द्वारा नारी जाति के लिए किये गये उपकारों का वर्णन किया। जैसे नारी शिक्षा, सती प्रथा निषेध, विधवा विवाह आदि।

इस अवसर पर आर्य महिला सम्मेलन का आयोजन श्रीमती उषा किरण कथूरिया, उपप्रधाना आर्य केन्द्रीय सभा, दिल्ली की अध्यक्षता में किया गया। जिसका संयोजन श्रीमती मधु भसीन ने किया। कार्यक्रम में मुख्य अतिथि रहीं श्रीमती बिमला बाथम जी, विधायक ने कहा कि वास्तव में परमात्मा ने प्रशासन का मौलिक रूप नारी के रूप में ही निर्मित किया है। मानव जीवन में घर की व्यवस्था संभालने की जिम्मेदारी नारी के कंधों पर होती है। एक परिवार में पांच-सात अलग-अलग आयु वर्ग, अलग-अलग बौद्धिक वर्ग, अलग-अलग विचार और धारणाओं वाले व्यक्तियों को एक सूत्र में बाँधने का काम नारी बहुत ही सुन्दरता से करती है। परिवार की इस जिम्मेदारी का विस्तार यदि समाज में किया जाये या फिर राष्ट्र में किया जाये या सम्पूर्ण वैश्विक स्तर पर किया जाये तो इस कार्य को अर्थात् वैश्विक स्तर पर प्रशासन की जिम्मेदारी संभालने का काम केवल और केवल नारी ही स्वभाविक रूप से कर सकती है क्योंकि परमात्मा ने नारी को इन गुणों से अलंकृत करके ही निर्मित किया है।

प्रतिदिन प्रभूभक्ति व महर्षि दयानंद को समर्पित गीतों भजनों का कार्यक्रम पं. संदीप आर्य एवं उनके साथियों द्वारा प्रस्तुत किया गया।

समापन समारोह में ऐमिटी शिक्षण संस्थान की चेयरपर्सन डॉ. अमिता चौहान जी ने बताया कि सोचो करने के लिए, सीखो जीतने के लिए और निरंतर सीखते रहो। केवल इन्फार्मेशन नॉलेज नहीं होती, नॉलेज डिग्रियों से नहीं आती डिगनिटी कुछ और होती है। संस्कृत ही विश्व की भाषाओं में श्रेष्ठ है। संस्कृत से संस्कृति आती है और संस्कृति से संस्कार आते हैं। अतः सभी युवक संस्कारवान बनें।

आर्य समाज की प्रधाना श्रीमती गायत्री मीना ने गुरूकुल की परिभाषा बताते हुये कहा कि गुरूकुल दो अक्षरों से बना है गुरू जमा कुल - गुरू अंधेरे को दूर करने वाला, प्रकाश प्रदान करने वाला होता है। गुरूओं के समूह को गुरूकुल कहा जाता है। गुरू की सेवा से ही विद्या की प्राप्ति होती है।

इस अवसर पर आर्ष गुरूकुल के छात्र एवं छात्राओं द्वारा देशभक्ति की रचनायें प्रस्तुत की गई जिसको श्रोताओं ने बहुत सराहा।

समारोह का कुशल संचालन आर्य समाज नोएडा के मंत्री कैप्टन अशोक गुलाटी व आचार्य डॉ. जयेन्द्र कुमार ने संयुक्त रूप से किया।

इस अवसर पर केन्द्रीय आर्य युवक परिषद के प्रान्तीय महामंत्री प्रवीण आर्य, आर्य केन्द्रीय सभा के प्रधान सत्यवीर चौधरी, मन्त्री अशोक गुलाटी, कृष्ण कुमार, श्रीमती सावित्री, उपप्रधान विजेन्द्र कठपालिया, डॉ. संध्या शर्मा, डॉ. कमल मल्होत्रा, श्री आदर्श बिश्नोई, राज सरदाना, श्रीमती शोभा सर्राफ, डिम्पल आनन्द, हर्ष बवेजा, अमित एवं अन्य आर्य समाजों के अधिकारीगण मुख्य रूप से उपस्थित रहे।

भवदीय,

कैप्टन अशोक गुलाटी
महामंत्री, आर्य समाज नोएडा
संपर्क सूत्र : ९५५५७७९५६१, ९८७१७९८२२१

१०१ कुण्डीय ऋग्वेदीय महायज्ञ

ध्वजारोहण समारोह

१०१ कुण्डीय ऋग्वेदीय महायज्ञ

आर्ष गुरुकुल नोएडा के शिक्षकगण

आर्ष कन्या गुरुकुल सोरखा के शिक्षकगण

विश्ववारा संस्कृति

बी–69, सैक्टर–33 नोएडा (उ.प्र.) दूरभाष–2505731